इस्लामी मालूमात

भाग-4

मैलाना हाफ़िज़ बदरूद्दीन (एम० ए०)

इस्लामी मालूमात

भाग-4

मैलाना हाफ़िज़ बदरूद्दीन (एम० ए०)
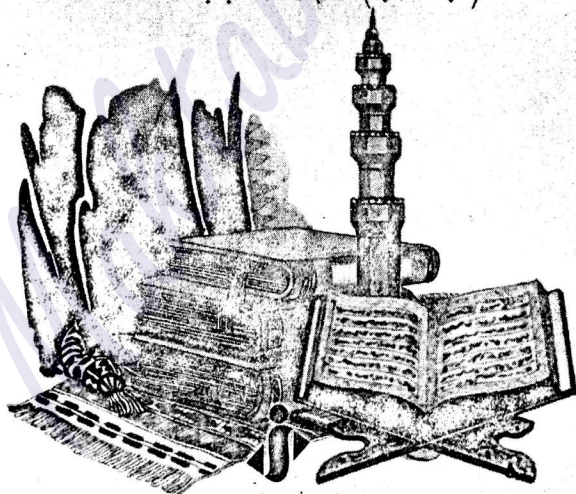
www.idaraimpex.com

इस्लामी मालूमात (भाग-4)

लेखकः मौलाना हाफ़िज बदरूद्दीन (एम. ए.)

अनुवादकः अहमद नदीम नदवी

प्रकाशन : 2013

ISBN 81-7101-551-4

TP-177-13

Published by Mohammad Yunus for

IDARA IMPEX

D-80, Abul Fazal Enclave-I, Jamia Nagar
New Delhi-110 025 (India)
Tel.: 2695 6832 Fax: +91-11-6617 3545
Email: **sales@idaraimpex.com**
Visit us at: **www.idarastore.com**

Designed & Printed in India

Typesetted at: **DTP Division**

IDARA ISHA'AT-E-DINIYAT

P.O. Box 9795, Jamia Nagar, New Delhi-110025 (India)

विषय-सूची

विषय पृष्ठ

रोज़ा फ़र्ज़ है और उसका मक़सद बुराइयों से बचने की सलाहियत पैदा करना है

अल्लाह तआला का फ़रमान

'ऐ ईमान वालो! तुम पर रोज़ा फ़र्ज़ किया गया जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किया गया था, ताकि तुम परहेज़गार बन जाओ।' —पारा 3, सूरः बक़रः,183

और रोज़े के ज़रिए तुम्हारे अन्दर धीरे-धीरे बुराइयों से बचने की सलाहियत पैदा हो जाए।

रोज़े का मतलब

अरबी में रोज़े को 'सौम' कहते हैं। इसकी जमा (बहुवचन) 'सियाम' है। सौम के मानी हैं रुकना।

इस लफ़्ज़ ही से रोज़े का मतलब ज़ाहिर है और तफ़्सील से यों समझिए कि रात के आख़िरी हिस्से के ख़त्म होने पर जिसे पौ फटना या सुबह सादिक़ होना कहते हैं, उस वक़्त से लेकर शाम को सूरज छिपने तक खाना-पीना और ग़ुस्ल तोड़ने वाली ख़्वाहिश को किसी तरह भी पूरा करने से रुक जाने का नाम रोज़ा है।

इस तारीफ़ से तीन बातें सामने आती हैं—

1. यह कि रोज़े का वक़्त सुबह सादिक़ से लकर सूरज ग़ुरूब होने तक रहता है,

2. यह कि रोज़े की हालत में कोई भी चीज़ दवा या ग़िज़ा (भोजन) के तौर पर नहीं खा सकते,

3. इसी तरह ग़ुस्ल तोड़ देने वाली ख़्वाहिश को किसी भी तरीक़े से पूरा करना बिल्कुल मना है,

सवालात

1. रोज़े को अरबी में क्या कहते हैं?
2. रोज़े का क्या मतलब है?
3. रोज़े का वक़्त कब शुरू और कब ख़त्म होता है?
4. रोज़े में कौन से काम नाजायज़ हैं?

रोज़े की क़िस्में

आप कोई भी इबादत करनी चाहें, उसी वक़्त उस पर सवाब और अल्लाह तआला की ख़ुशी की उम्मीद की जा सकती है, जबकि वह अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ अदा की जाए, अगर उसमें ज़र्रा बराबर भी अपनी मर्ज़ी से कमी या ज़्यादती की जाए तो वह बजाए सवाब के अज़ाब और अल्लाह पाक की नाराज़ी का सबब बन जाता है। यही हाल रोज़े का है, बहुत अच्छी इबा्दत है, अल्लाह तआला को सबसे ज़्यादा पसन्द है, लेकिन अगर यही रोज़ा आप ईद या बक़रीद के दिन रख लें, तो बजाए सवाब के गुनाह होगा, क्योंकि ईद व बक़रीद में रोज़ा रखना हराम है, इस तरह के साल भर में पांच रोज़े हराम हैं जिनकी तफ़्सील आगे आ रही है।

1. फ़र्ज़े ऐन— रमज़ाम शरीफ़ के एक माह के रोज़े हर उस मुसलमान आक़िल, बालिग़ मर्द, औरत पर फ़र्ज़ है जिनके लिए कोई शरई मजबूरी न हो और उन रोज़ों का वक़्त भी मुक़र्रर है यानी रमज़ानुल मुबारक का महीना।

2. फ़र्ज़े ग़ैर मुऐयन— अगर रमज़ान शरीफ़ में किसी मजबूरी की वजह से रोज़े छूट गए हों, तो वे रोज़े फ़र्ज़ ग़ैर मुऐयन कहलाते हैं।

इन रोज़ों का रखना फ़र्ज़ है, मगर इनका वक़्त मुक़र्रर नहीं, इसलिए इनको ग़ैर मुऐयन कहते हैं।

अगरचे इनका वक़्त मुतऐयन नहीं है, मगर जितनी जल्द मुम्किन हो, रख लेना चाहिए।

3. वाजिब मुऐयन— अगर किसी ने मन्नत मानी कि मैं इम्तिहान में कामियाब हो गया तो ख़ुदा के वास्ते जनवरी की पहली का रोज़ा रखूंगा। यह रोज़ा वाजिब मुऐयन कहलाता है। वाजिब मुऐयन की दो शक्लें हैं—

अगर किसी ने ख़ास दिन या तारीख़ की मन्नत मानी तो रोज़ा वाजिब मुऐयन होगा।

अगर दिन-तारीख़ मुक़र्रर नहीं की, यों ही कह दिया कि मैं कामियाब हो गया तो दो रोज़े रखूंगा, यह वाजिब ग़ैर मुऐयन होगा।

4. सुन्नत रोज़े— वे रोज़े, जो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद रखे या रखने की तर्ग़ीब दी, शौक दिलाया, उनको मस्नून रोज़े कहते हैं।

जैसे मुहर्रम की नवीं, दसवीं, ग्यारहवीं तारीख़ के रोज़े। मुहर्रम की दसवीं तारीख़ को आशूरा कहते हैं और ये रोज़े आशूरा के रोज़े कहलाते हैं।

अरफ़ा

यानी क़ुरबानी के महीने (ज़िलहिज्जा) की नवीं तारीख़ का रोज़ा रखना, यह सिर्फ़ उन लोगों के लिए सुन्नत है जो हज न कर रहे हों और अपने घर पर बक़रीद मना रहे हों।

हर इस्लामी महीने की 13-14-15 तारीख़ के तीन रोज़े सुन्नत हैं। इन्हें अय्यामें बीज़ के रोज़े कहते हैं।

5. मुस्तहब— फ़र्ज़, वाजिब और सुन्नत रोज़ों के बाद तमाम रोज़े मुस्तहब हैं, लेकिन कुछ रोज़े ऐसे हैं कि इनमें सवाब ज़्यादा है

जैसे शव्वाल के छः रोज़े, शाबान की पन्द्रह तारीख़ का रोज़ा, पीर जुमेरात और जुमा के दिन के रोज़े मुस्तहब हैं।

6. मक्रूह रोज़े— सिर्फ़ सनीचर का रोज़ा रखना मक्रूह है। (यह यहूदियों का ख़ास दिन है।)

सिर्फ़ आशूरा (यानी मुहर्रम की 10 तारीख़) का रोज़ा मक्रूह है। नवरोज़ के दिन का रोज़ा मक्रूह है।

औरत को बग़ैर अपने शौहर की इजाज़त के नफ़्ली रोज़ा रखना मक्रूह है।

7. हराम रोज़े— साल भर में पांच दिन के रोज़े हराम हैं—

● ईदुल फ़ित्र, ● ईदुल अज़्हा और ● अय्यामे तश्रीक़ के तीन रोज़े।

नोट— अय्यामे तश्रीक़ ज़िलहिज्जा की 11-12-13 तारीख़ को कहते हैं।

लिखाई का काम

नीचे लिखे हुए रोज़े इसी तरह अपनी कापी में लिखिए और अपनी याद के मुताबिक़ हर एक के आगे इसकी क़िस्म लिखिए, जैसे नं० 1 में लिखा गया है—

1.	रमज़ानुल मुबारक के रोज़े	फ़र्ज़
2.	रमज़ान के छूटे हुए रोज़े	
3.	मुकर्रर दिन की मन्नत का रोज़ा	
4.	ग़ैर-मुक़र्रर दिन की मन्नत का रोज़ा	
5.	आशूरा के दिन का रोज़ा	
6.	अरफ़ा के दिन का और अय्यामे बीज़ के रोज़े	
7.	शव्वाल के छः रोज़े और पन्द्रह शाबान का रोज़ा	
8.	सिर्फ़ सनीचर का रोज़ा	
9.	सिर्फ़ 10 मुहर्रम का रोज़ा	
10.	औरत का नफ़्ली रोज़ा बग़ैर शौहर की इजाज़त के	
11.	ईदुल फ़ित्र और ईदुल अज़्हा के रोज़े, अय्यामे तशरीक़ के रोज़े	

रोज़ा की नीयत कब और किस तरह करें?

जब रोज़ा रखने का दिल में इरादा कर लिया, बस यही नीयत है। नीयत के लफ़्ज़ों का ज़ुबान से कहना कोई ज़रूरी नहीं, हां, अगर बग़ैर रोज़े का इरादा किए कोई आदमी सुबह सादिक़ से सूरज के डूबने तक भूखा-प्यासा रहा और कोई भी रोज़ा तोड़ने वाला काम नहीं किया, तो यह रोज़ा नहीं होगा, क्योंकि रोज़े के रखने का इरादा नहीं किया था।

किस रोज़े की किस वक़्त नीयत की जाए?

रमज़ान शरीफ़, नज़्रे मुऐयन और सुन्नत-नफ़्ल रोज़ों की नीयत आधे दिन से पहले की जाए।

रमज़ानुल मुबारक के क़ज़ा रोज़े, कफ़्फ़ारे के रोज़े और नज़्र ग़ैर-मुऐयन के रोज़ों की नीयत सुबह सादिक़ से पहले करनी ज़रूरी है, जिन रोज़ों के दिन पहले से मुतऐयन हैं जैसे रमज़ाम शरीफ़ के रोज़े, नज़्रे मुऐयन के रोज़े और इनके अलावा तमाम दिन सुन्नत-नफ़्ल रोज़ों के लिए हैं। इन रोज़ों की नीयत करने में, चाहे आप ख़ास रोज़े की क़िस्म का नाम न लें या लें, उस दिन वही रोज़ा होगा जिसका दिन पहले से मुक़र्रर है, जैसे रमज़ान में आपने सिर्फ़ यह सोच लिया कि कल को रोज़ा रखूंगा। तो यह रोज़ा रमज़ान ही का होगा और कोई नहीं होगा।

या नज़्रे मुऐयन के दिन आपने सिर्फ़ रोज़े की नीयत कर ली, तो यह रोज़ा नज़्रे मुऐयन ही का होगा।

वे रोज़े जिनके पहले से दिन मुक़र्रर नहीं हैं, जैसे कफ़्फ़ारे या नज़्रे मुऐयन या क़ज़ा रमज़ान के रोज़े, इन रोज़ों की नीयत में रोज़े की क़िस्म का भी इरादा करना होगा, क्योंकि उनका दिन मुक़र्रर नहीं है, इसलिए जो रोज़ा आप रखना चाहते हैं, ख़ास उसकी नीयत न की तो वह नफ़्ली रोज़ा हो जाएगा, जो रोज़ा आपको रखना था, उसकी क़ज़ा आपके ज़िम्मे बाक़ी रही।

आधा दिन कब होता है?

आमतौर पर यह मशहूर है कि आधा दिन दोपहर बारह बजे होता है, यह दुरुस्त नहीं है।

हमेशा मौसम के लिहाज़ से आधे दिन का वक़्त बदता रहता है, जैसे 10 जुलाई को दिल्ली में सूरज 5 बज कर 29 मिनट पर निकलता है और 7 बज कर 23 मिनट पर डूबता है तो उस दिन दिल्ली में आधा दिन दोपहर में 12 बज कर 26 मिनट पर होगा। इसी तरह हर जगह हर मौसम में अलग-अलग वक़्त होता है, इसको निस्फ़ुन्नहार कहते हैं।

सवालात

1. रमज़ानुल मुबारक, नज़्रे मुऐयन और सुन्नत-नफ़्ल रोज़ों की नीयत किस वक़्त तक की जा सकती है?

2. रमज़ानुल मुबारक के क़ज़ा रोज़े, कफ़्फ़ारे के रोज़े और नज़्रे ग़ैर-मुऐयन के रोज़ों की नीयत किस वक़्त करनी ज़रूरी है?

3. वे कौन से रोज़े हैं जिनकी नीयत में रोज़े की क़िस्म का नाम होता है?

4. वे कौन से रोज़े हैं जिनकी नीयत में क़िस्म का नाम लेना ज़रूरी नहीं है?

5. वे कौन से रोज़े हैं जिनकी नीयत में क़िस्म का नाम लेना ज़रूरी है?

6. निस्फ़ुन्नहार का क्या मतलब है?

इन रोज़ों की नीयत आधे दिन से पहले-पहले की जा सकती है	इन रोज़ों की नीयत सुबह सादिक़ से पहले करनी ज़रूरी है
1. रमज़ानुल मुबारक के अदा रोज़े	1. रमज़ानुल मुबारक के क़ज़ा रोज़े
2. नज़्रे मुऐयन के रोज़े	2. कफ़्फ़ारे के रोज़े
3. सुन्नत और नफ़्ल रोज़े	3. नज़्रे ग़ैर-मुऐयन के रोज़े

रोज़े के मुस्तहब काम

रोज़े में इन कामों का ख़्याल रखा जाए तो सवाब बढ़ जाता है और न ख़्याल रखा जाए तो कोई गुनाह नहीं होता।

मुस्तहब काम ये हैं–

- रोज़े की रात से नीयत करना,
- सेहरी आख़िर वक़्त में खाना, मगर इतनी देर न हो कि सुबह सादिक़ हो जाने का शुब्हा हो जाए,
- इफ़्तार में जल्दी करना मुस्तहब है, मगर इसका यक़ीन कर लेना चाहिए कि सूरज डूब गया है,
- ज़ुबान को हर ग़लत बात से रोके रखना,
- छुहारे या खजूर और ये न हों तो पानी से रोज़ा इफ़्तार करना।

सेहरी और इफ़्तार

रात के आख़िरी हिस्से में सुबह सादिक़ से पहले कुछ खाने-पीने को सेहरी कहते हैं।

सेहरी खाना सुन्नत है। अगर भूख न हो, तब भी थोड़ा बहुत कुछ न कुछ खा-पी लेना चाहिए।

इफ़्तार का मतलब है रोज़ा खोलना।

सूरज डूबते ही तुरन्त रोज़ा खोलना चाहिए, ताख़ीर करना मक्रूह है, मगर सूरज डूबने का यक़ीन कर लेना ज़रूरी है।

सवालात

1. रोज़े के मुस्तहब काम क्या हैं?
2. सेहरी और इफ़्तार में किन बातों का ख़्याल रखना ज़रूरी है।

रोज़े का सवाब कम हो जाएगा

नीचे लिखी हुई बातों से रोज़े का सवाब कम हो जाता है, इनको रोज़े की मक्रूह चीज़ें कहते हैं–

1. गोंद चबाना या कोई और चीज़ मुंह में डाले रखना मक्रूह है।

2. आमतौर पर किसी चीज़ का चखना मक्रूह है, मगर उस औरत के लिए मक्रूह नहीं जिसका ख़ाविंद बद-मिज़ाज हो, यह औरत चाहे तो सालन को ज़ुबान से चख सकती है।

3. बड़ा इस्तिंजा क़रने में इतना मुबालग़ा (ज़्यादती) नहीं करना चाहिए, जिससे पानी के अन्दर पहुंच जाने का डर हो, इससे रोज़ा मक्रूह हो जाता है।

4. कुल्ली या नाक में पानी डालने में भी मुबालग़ा करना मक्रूह है।

5. मुंह में बहुत सा थूक जमा करके निगलना मक्रूह है।

6. रोज़ा में किसी की पीठ पीछे बुराई करना मक्रूह है, झूठ बोलना या किसी क़िस्म की बद-कलामी करने से रोज़ा मक्रूह हो जाता है।

7. रोज़े में बेक़रारी और घबराहट ज़ाहिर करना मक्रूह है।

8. नहाने की ज़रूरत हो जाए तो गुस्ल को सुबह सादिक़ के बाद तक टालना मक्रूह है।

9. कोयला, मंजन, टूथ पेस्ट या इस क़िस्म की किसी चीज़ से दांत मांझना मक्रूह है, क्योंकि इन चीज़ों के हलक़ में जाने का डर है।

रोज़े में नीचे लिखे काम जायज़ हैं

1. सुरमा लगाना,

2. बदन या सर में तेल डालना,

3. ठंडक के लिए ग़ुस्ल करना,

4. मिस्वाक करना, अगरचे तर जड़ या शाख़ की हो,

5. किसी क़िस्म की ख़ुश्बू लगाना या सूंघना,

6. अगर भूले से कुछ खा-पी लिया और याद आते ही फ़ौरन छोड़ दिया तो रोज़े में कोई नुक़सान नहीं आएगा,

7. रोज़े में अपने आप बिना इरादा क़ै हो गई,

8. बिना इरादा किए धुवां या मक्खी हलक़ से नीचे उतर गई,

इन तमाम बातों से रोज़े के सवाब में कुछ कमी नहीं आती।

इंजेक्शन या टीका

रोज़े की हालत में इंजेक्शन लगवाना या किसी बीमारी से बचने के लिए टीका लगवाना जायज़ है, इससे रोज़े में कोई नुक़्सान नहीं आता।

सवालात

1. किन बातों से रोज़े का सवाब कम हो जाता है?

2. जब रोज़े में मंजन वग़ैरह इस्तेमाल करना मकरूह है, तो दांत किस तरह साफ़ करें?

3. रोज़े में कौन-से काम जायज़ हैं?

लिखाई का काम

रोज़े की मक्रूह और जायज़ बातों को पहले अच्छी तरह ज़ेहन में बिठा लीजिए, फिर नीचे लिखे हुए मस्अलों को अपनी कापी में इस नक़्शे के मुताबिक़ उतारिए और हर सवाल के सामने मक्रूह या जायज़ के ख़ाने में सही का निशान लगाइए।

क्र.सं.	रोज़े की हालत में	मक्रूह है	जायज़ है
1.	सुरमा लगाना,		
2.	झूठ बोलना,		
3.	मिस्वाक करना,		
4.	सिर में तेल डालना,		
5.	मंजन या टूथ पेस्ट से दांत मांझना,		
6.	ख़ुश्बू लगाना या सूंघना,		
7.	मुंह में बहुत-सा थूक जमा करके निगलना,		
8.	ठंडक के लिए ग़ुस्ल करना,		
9.	बेक़रारी और घबराहट ज़ाहिर करना,		
10.	रोज़े में इंजेक्शन या टीका लगवाना,		

रोज़ा टूट जाएगा

मगर इस सूरत में सिर्फ़ क़ज़ा का एक रोज़ा रखना पड़ेगा, अगर नीचे लिखी बातों में से कोई बात पेश आती है–

1. किसी ने ज़बरदस्ती रोज़ेदार के मुंह में कोई चीज़ डाल दी और वह हलक़ से नीचे उतर गई,

2. जान कर मुंह भर कर क़ै कर डाली,

3. ख़ुद क़ै आई और जान कर हलक़ में लौटा ली,

4. पत्थर का टुकड़ा, मिट्टी, गुठली, काग़ज़ या इस क़िस्म की कोई ऐसी चीज़ जो आमतौर पर खाई नहीं जाती, अगर किसी ने जान कर निगल ली तो सिर्फ़ क़ज़ा करना होगी। अगर किसी ने मिट्टी, किसी क़िस्म की गुठली या और कोई ऐसी चीज़ जो आमतौर पर खाई नहीं जाती, खाना या दवा के तौर पर जान कर खा-पी ली तो इस शक्ल में क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों करने होंगे।

5. रोज़ा याद था और कुल्ली करते वक़्त बे-इरादा हलक़ से पानी नीचे उतर गया, रोज़ा क़ज़ा करना होगा।

6. दांतों से रुकी हुई कोई चीज़ जो चने के बराबर या उससे ज़्यादा हो, खा ली, रोज़ा क़ज़ा करना होगा।

अगर दांतों से निकली हुई चीज़ चने से कम हो और मुंह ही मुंह में बग़ैर बाहर निकाले खा ली, तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

दांतों में रुकी हुई कोई चीज़ अगर चने के दाने से कम हो और हाथ से बाहर निकाली, फिर खाई, रोज़ा टूट जाएगा, क़ज़ा करनी होगी।

7. कान में तेल डालना,

8. नास लिया,

9. दांतों से निकले हुए ख़ून को निगल लिया, जबकि ख़ून ज़्यादा और थूक कम हो,

10. भूले से कुछ खाया या पिया था, फिर यह समझकर कि रोज़ा टूट गया होगा, फिर जान कर खा लिया, पहले रोज़ा नहीं टूटा था, अब टूट गया।

11. आंधी वग़ैरह की वजह से या ग़लत अन्दाज़े से किसी ने यह समझा कि अभी सुबह सादिक़ नहीं हुई है और सेहरी खा ली, फिर मालूम हुआ, सुबह सादिक़ हो चुकी थी, रोज़ा टूट गया।

12. इस तरह शाम को गहरे बादल या आंधी वग़ैरह की वजह से किसी ने यह समझा कि सूरज डूब गया होगा, रोज़ा खोल लिया, फिर मालूम हुआ कि सूरज नहीं छुपा था, रोज़ा टूट गया।

13. रमज़ान शरीफ़ के अलावा और किसी दिन किसी क़िस्म का रोज़ा जान कर तोड़ दिया, इन तमाम शक्लों में जितने रोज़े टूटे हैं, उतने ही क़ज़ा रखने होंगे।

सवालात

1. रोज़ा क़ज़ा करने का क्या मतलब है?

2. किसी ने पत्थर या मिट्टी बग़ैर दवा या खाना समझे खाई, उसके लिए क्या हुक्म है?

3. किसी ने पत्थर या मिट्टी खाना या दवा के तौर पर खाई, उसके लिए क्या हुक्म है?

4. रोज़ा याद था और कुल्ली करते वक़्त इत्तिफ़ाक़ से पानी हलक़ से नीचे उतर गया, अब क्या करे?

5. रोज़ा याद था और कुल्ली करते वक़्त जान कर पानी हलक़ से नीचे उतार लिया, उसके लिए क्या हुक्म है?

6. भूले से पेट भरकर खाना खा लिया, आख़िर तक रोज़ा याद नहीं आया, उसके लिए क्या हुक्म है?

7. भूले से खाना शुरू किया, एक निवाला खाया था कि याद आ गया, मगर फिर यह सोचकर कि अब तो रोज़ा टूट ही गया होगा, फिर पेट भरकर खा लिया, उसके लिए क्या हुक्म है?

8. किसी ने अपने दांतों से निकले हुए ख़ून को निगल लिया, उसमें थूक ज़्यादा और ख़ून कम था, इसके लिए क्या हुक्म है?

जान कर रोज़ा तोड़ने की सज़ा

अगर किसी ने रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा रखा और बग़ैर किसी शरई मजबूरी के जान कर तोड़ दिया, ऐसे आदमी को सज़ा मिलनी चाहिए, क्योंकि उसने अल्लाह के हुक्म का कोई एहतराम नहीं किया और जान कर बग़ैर किसी मजबूरी के हुक्म के ख़िलाफ़ किया।

इस सज़ा को कफ़्फ़ारा कहते हैं।

कफ़्फ़ारा किस तरह अदा किया जाए?

रोज़ा तोड़ने वाला आदमी या तो एक ग़ुलाम आज़ाद करे,

अगर ग़ुलाम न हो तो दो महीने के लगातार रोज़े रखे,

अगर रोज़ा रखने की ताक़त न हो तो साठ मिस्कीनों को दो वक़्त पेट भर कर खाना खिलाए।

अब ग़ुलामों का सिलसिला हमारे मुल्क में तो नहीं है, इसलिए पहली शक्ल पर अमल करना मुम्किन नहीं है, बाद की दो शक्लें रह जाती हैं या दो माह के रोज़े रखना या साठ मिस्कीनों को खाना खिलाना।

अगर कोई आदमी खाना खिलाने के बजाए नक़द या जिंस गल्ला देना चाहे तो दे सकता है।

इसकी शक्ल यह होगी कि साठ मिस्कीनों को एक ही दिन में फ़ी आदमी एक किलो 630 ग्राम के हिसाब से गेहूं दे दिया जाए, चाहे एक मिस्कीन को साठ दिन तक रोज़ाना एक किलो 630 ग्राम दिया जाए, दोनों तरह जायज़ है, लेकिन एक मिस्कीन को एक किलो 630 ग्राम से कम दिया तो कफ़्फ़ारा अदा न होगा।

इसी तरह अगर एक मिस्कीन को एक ही दिन में साठ मिस्कीनों का खाना या ग़ल्ला वग़ैरह दे दिया तो सिर्फ़ एक दिन का अदा होगा, उनसठ मिस्कीनों को फिर देना होगा।

कफ़्फ़ारा कब अदा करना होगा?

रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा रखने के बाद अगर नीचे लिखी हुई बातों में से कोई एक बात भी पेश आ जाए, तो रोज़ा टूट जाएगा, कफ़्फ़ारा भी अदा करना होगा।

1. रमज़ान में रोज़ा रख कर कोई ऐसी चीज़ जो ग़िज़ा या दवा या लज़्ज़त के तौर पर इस्तेमाल की जाती है, जान कर खा-पी ली।

2. रोज़ा याद था और जान कर ग़ुस्ल फ़र्ज़ कर देने वाली ख़्वाहिश पूरी की।

3. फ़स्द खोलवाई या सुरमा लगाया और यह समझ लिया कि रोज़ा टूट गया होगा, फिर जान कर खा-पी लिया।

इन तमाम शक्लों में रोज़ा टूट जाएगा और क़ज़ा कफ़्फ़ारा दोनों ज़रूरी होंगे।

सवालात

1. कफ़्फ़ारा अदा करने की तीन शक्लें क्या हैं?

2. मौजूदा ज़माने में किस शक्ल पर अमल करना मुम्किन नहीं है?

3. रोज़े में किन ग़लतियों की वजह से कफ़्फ़ारा देना ज़रूरी होता है?

4. रमज़ान के अलावा आम दिनों में अगर किसी ने रोज़ा रखकर इस क़िस्म की ग़लती की तो क्या करना होगा?

रोज़ा रखने की ताक़त न रहे तो

ऐसा आदमी जिसमें ज़्यादा बुढ़ापे या बीमारी की वजह से नमाज़ पढ़ने या रोज़ा रखने की ताक़त नहीं रही तो हर फ़र्ज़ और वाजिब नमाज़ का फ़िदया दे।

रमज़ान के हर रोज़े का फ़िदया दे।

फ़िदया क्या है?

फ़िदया नमाज़ या रोज़े के बदले का नाम है और वह इस तरह दिया जाता है कि हर नमाज़ या हर रोज़े के बदले एक किलो 630 ग्राम गेहूं किसी ग़रीब मुस्तहिक़ को दे दिया जाए।

या तीन किलो 267 ग्राम जौ, बाजरा, ज्वार या चावल दे दिया जाए या इनमें से किसी चीज़ की नक़द क़ीमत अदा कर दी जाए।

रोज़ा और नमाज़ दोनों के फ़िदए की एक ही मिक़्दार है। अगर किसी आदमी को ऐसी बीमारी या बुढ़ापे की कमज़ोरी हो गई कि सेहत आने की उम्मीद ही नहीं रही तो इन नमाज़ों या रोज़ों का फ़िदया अदा करना होगा।

अगर ऐसी बीमरी या कमज़ोरी है कि फिर ताक़त आने की उम्मीद है तो ताक़त आने के बाद, छूटे हुए रोज़े और नमाज़ें क़ज़ा करनी होंगी।

अगर किसी को अपनी बीमारी में सेहत से नाउम्मीदी हो गई और रोज़ों का फ़िदया दे दिया, फिर सेहत हो गई तो जिन रोज़ों का फ़िदया दिया है, उनकी क़ज़ा करनी होगी। जो फ़िदया अदा कर दिया, उसका सवाब मिलेगा, लेकिन क़ज़ा ज़रूरी है। बीमारी की हालत में जब तक इशारे से नमाज़ अदा करने की ताक़त थी, इस

हालत में नमाज़ नहीं पढ़ी, तो इन नमाज़ों का फ़िदया देना होगा।

अगर बीमारी इतनी तेज़ हो गई कि इशारे से नमाज़ पढ़ने की ताक़त भी नहीं रही और इस हालत में छः नमाज़ों का वक़्त गुज़र गया, तो इस हालत की नमाज़ फ़र्ज़ नहीं, न उसका फ़िदया देने की ज़रूरत है। अगर किसी बीमार पर बेहोशी की हालत में छः नमाज़ों का या इससे ज़्यादा वक़्त गुज़र गया, फिर उसे होश आ गया और इशारे से नमाज़ पढ़ने की शक्ल आ गई, फिर इंतिक़ाल हो गया तो जितनी नमाज़ें होश की हालत में हुई हैं, सिर्फ़ उनका फ़िदया देना होगा, बेहोशी की हालत में छूटी हुई नमाज़ों का फ़िदया नहीं है, हां, अगर बेहोशी के बाद बिल्कुल सेहतमंद हो जाए, तो जितनी नमाज़ें होश की हालत में छूटी हैं, उनकी क़ज़ा करना होगी, फ़िदया नहीं।

मस्अलों का एक नक़्शा

पहले इस सबक़ को अच्छी तरह याद कीजिए, फिर लिखे हुए मस्अले नक़्शे के मुताबिक़ कापी में उतारिए और हर सवाल के सामने सही का निशान (✓) लगाइए—

क्र.सं.	इस मस्अले में	फ़िदया होगा	क़ज़ा होगी	माफ़ है
1.	किसी की सफ़र में फ़र्ज़ या वाजिब नमाज़ छूट गई			
2.	किसी के रमज़ान के रोज़े छूट गए			
3.	जिस आदमी में बुढ़ापा या बीमारी की वजह से नमाज़ रोज़े की ताक़त नहीं रही			
4.	अगर बीमारी में रोज़ा, नमाज़ का फिदया देने के बाद फिर ताक़त आ गई			
5.	अगर किसी पर बीमारी की शिद्दत में छः नमाज़ों का वक़्त गुज़र गया तो			
6.	अगर बेहोशी की हालत में पांच नमाज़ों का वक़्त गुज़र गया तो क्या करें			

सवालात

1. अगर कोई शदीद बीमरी के बाद फिर इस क़ाबिल हो जाए कि इशारे से नमाज़ पढ़ सके और फिर इंतिक़ाल हो जाए तो होश की हालत में क़ज़ा नमाज़ों का क्या होगा?

2. अगर कोई बेहोशी के बाद बिल्कुल सेहतमंद हो जाए तो होश की क़ज़ा नमाज़ों का क्या होगा?

अगर रमज़ान का रोज़ा छूट जाए तो

- जब वक़्त मिले, रख लो।
- अगर किसी ने बग़ैर किसी मजबूरी के फ़र्ज़ या वाजिब मुऐयन रोज़े मुक़र्ररा वक़्त पर नहीं रखे,
- या किसी मजबूरी की वजह से कुछ रोज़े छूट गए,
- या रोज़ा रखकर किसी वजह से तोड़ दिया या टूट गया,

इन छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा रखना फ़र्ज़ है, जब वक़्त मिले और जितनी जल्द मुम्किन हो, रख लेना चाहिए।

अगर बहुत से रोज़े छूटे हैं तो ज़रूरी नहीं है कि लगातार रखो, जिस शक्ल में आसान हो, चाहे लगातार रखो या बीच में छोड़ कर रखो।

नफ़्ली नमाज़ या नफ़्ली रोज़ा

अगर किसी ने नफ़्ल नमाज़ शुरू की और किसी वजह से तोड़ दी, किसी ने नफ़्ल रोज़ा रखा और किसी वजह से तोड़ दिया, अब इनका दोबारा अदा करना वाजिब हो गया। नफ़्ली नमाज़ या नफ़्ली रोज़ा किसी पर ज़रूरी नहीं है, मगर जब एक बार शुरू कर दिया जाए तो पूरा करना वाजिब हो गया। अगर तोड़ दिया जाए तो क़ज़ा करना ज़रूरी है।

सवालात

1. अगर कोई मुसाफ़िर सफ़र में रमज़ान शरीफ़ के रोज़े नहीं रख सका तो कब रखे?

2. एक लड़के ने इरादा किया कि मैं इम्तिहान में कामियाब हो गया तो रजब की पहली तारीख़ का रोज़ा रखूंगा। जब रजब की पहली तारीख़ आई तो वह बीमार हो गया और रोज़ा नहीं रख सका, अब बताइए क्या करे?

3. अगर किसी के रमज़ान में दस रोज़े क़ज़ा हो गए थे, उसने कभी एक, कभी दो, साल भर में दस रोज़े पूरे किए, बताइए, उसके रोज़े अदा हो गए या नहीं?

किन मजबूरियों की वजह से रमज़ान के रोज़े क़ज़ा करने की इजाज़त है

1. मुसाफ़िर को सफ़र की हालत में रोज़ा क़ज़ा करने की इजाज़त है, लेकिन उसे अख़्तियार है अगर चाहे तो रख ले और छोड़ दे तो कोई गुनाह नहीं।

मुसाफ़िर के रोज़े और नमाज़ के हुक्म में यह फ़र्क़ है कि क़स्र नमाज़ तो पढ़ना ज़रूरी है, अगर अपनी मर्ज़ी से फ़र्ज़ नमाज़ पूरी पढ़नी चाहे तो जायज़ नहीं। लेकिन रोज़े की इजाज़त में अख़्तियार है, चाहे सफ़र में रख ले, चाहे क़ज़ा कर दे, घर आकर रख ले।

2. ऐसी बीमारी जिसमें रोज़ा रखने की ताक़त न हो, या मरज़ बढ़ जाने का अंदेशा हो, रोज़ा क़ज़ा करने की इजाज़त है।

3. ऐसा बुढ़ापा जिसमें रोज़ा रखने की ताक़त न हो, फ़िदया देने की इजाज़त है।

4. **औरतों के लिए :** बालिग़ औरतों की दो तरह की नापाकी ऐसी होती है जिसमें उनको रोज़ा-नमाज़ में रियायत दी गई है—

एक तो हर महीने हर सेहतमंद औरत को मुख़्तलिफ़ आदतों के लिहाज़ से कुछ दिन नापाकी रहती है जो ज़्यादा से ज़्यादा दस दिन तक चलती है और कम से कम तीन दिन,

दूसरी नापाकी बच्चे की पैदाइश के बाद ज़्यादा से ज़्यादा चालीस दिन तक चलती है।

दस दिन और चालीस दिन की मुद्दत शरीअत ने इसलिए मुक़र्रर की है कि अगर किसी को इस मुद्दत से ज़्यादा नापाकी रहे तो वह एक तरह का मरज़ होगा और उसमें यह रियायत हासिल न होगी।

इन दोनों तरह की नापाकियों में औरत की नमाज़ तो बिल्कुल माफ़ है और रोज़ा क़ज़ा करने की इजाज़त होती है यानी जब पाक हो जाए तो छूटे हुए रोज़े क़ज़ा करे।[1]

रमज़ान में ग़लत रस्म व रिवाज

बहुत सी जगह रिवाज देखा गया कि रमज़ान में अगर किसी के बच्चे को पहला रोज़ा रखवाना होता है, तो उसके लिए रमज़ान का पहला, मंझला, अल-विदाअ़ के जुमा का या आख़िरी रोज़ा रखवाते हैं।

इसी तरह अगर किसी ने बीमारी की वजह से या और किसी वजह से रोज़ा नहीं रखा और फिर रखने का, इरादा किया तो यही कहा जाता है कि अब मंझला या अल-विदाअ़ का रोज़ा रखेंगे।

---

1. नापाकी की तफ़्सीलात लड़कियों के स्कूलों में उस्तानियां समझा सकती हैं। मख़्लूत तालीम के स्कूलों में उस्ताद पांचवीं जमाअत से ऊपर की लड़कियों को यह हिदायतें करें कि वे बड़ी सहेलियों से इसका मतलब समझ लें, बड़ी औरतें तफ़्सील के लिए बहिश्ती ज़ेवर, भाग दो देखें।

इस तरह के दिन मुतऐयन कर देने से ऐसा मालूम होता है कि इन ख़ास दिनों में इनके नज़दीक ज़्यादा सवाब है या इनकी ज़्यादा अहमियत है, हालांकि इस्लाम में रमज़ान के सब रोज़ों का दर्जा बराबर है, मंझला या अल-विदाअ़ के रोज़े की कोई ख़ुसूसियत नहीं है।

इसलिए यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि रमज़ान के सब रोज़े बराबर हैं, मंझले या अल-विदाअ़ में कोई ख़ास बात नहीं। हां, अगर कोई अपनी तरफ़ से ख़ुद उनका सवाब ज़्यादा समझ ले तो यह बिदअत और गुनाह होगा।

इबादत की ख़ास रातें

हां, रमज़ान की आख़िरी दस रातों में इबादतों की ख़ास फ़ज़ीलत है। यह रातें शबेक़द्र कहलाती हैं।

ये रातें 21-23-25-27-29 तारीख़ों की हैं, मगर इनमें भी असल रात कोई एक ही है। जिसका सही इल्म किसी को नहीं है। कोई भी हो सकती है कि उस रात की इबादत का सवाब हज़ार रातों के बराबर होता है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया, हमने क़ुरआन मजीद को शबेक़द्र में उतारा है। आपको मालूम है शबेक़द्र कैसी चीज़ है, शबेक़द्र हज़ार महीनों से बेहतर है और वह शबेक़द्र ऐसी है कि उस रात फ़रिश्ते और जिब्रील अलैहिस्सलाम अपने परवरदिगार के हुक्म से हर भली बात को लेकर ज़मीन पर उतरते हैं, वह सरापा सलामती है, वह रात फ़ज्र के तुलू (निकलना) तक रहती है। —सूरः क़द्र, पारा 30

प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया, यह रमज़ान का महीना तुम्हारे पास आ गया है और इसमें एक ऐसी रात है जो हज़ार

महीनों से बेहतर है, जो आदमी इस रात से महरूम रहा, वह तमाम भलाइयों से महरूम रहा।

इस आयत और हदीस से रमज़ान की आख़िरी दस रातों की इबादत की ख़ुसूसियत मालूम होती है, इसलिए इनका ज़रूर ख़्याल रखना चाहिए और जो इबादत भी मुम्किन हो और आसानी से करें।

जैसे नफ़्ल नमाज़ पढ़ना, क़ुरआन शरीफ़ की तिलावत करना, दुआ मांगना, मज़हबी किताबें पढ़ना, यह दुआ भी पढ़ सकते हैं–

'अल्लाहुम-म इन्न-क अ़फ़ूवुन तुहिब्बुल अफ़्व फ़अ़-फु अ़न्नी'

सवालात

1. रमज़ान में इबादत की ख़ास रातें कौन-सी हैं?
2. शबेक़द्र के बारे में अल्लाह पाक ने क्या फ़रमाया है?
3. शबेक़द्र के बारे में हुज़ूर सल्ल० ने क्या फ़रमाया है?
4. शबेक़द्र में क्या करना चाहिए?

रमज़ान शरीफ़ का एहतराम करो

रमज़ान शरीफ़ में अगर किसी का रोज़ा टूट जाए तो फिर शाम तक उसे कुछ खाना-पीना नहीं चाहिए।

कोई मुसाफ़िर दिन में सफ़र से वापस आया, सफ़र की वजह से उसका रोज़ा नहीं था।

जिस नाबालिग़ बच्चे पर रोज़ा फ़र्ज़ नहीं था, वह दिन में बालिग़ हो गया।

वह नापाक औरत जिसको रोज़ा क़ज़ा करने की इजाज़त थी, दिन में पाक हो गई।

किसी आदमी पर दिमाग़ ख़राब होने की वजह से रोज़ा फ़र्ज़ नहीं था, वह दिन में किसी वक़्त ठीक हो गया।

इस क़िस्म के तमाम लोगों को शाम तक बग़ैर कुछ खाए-पिए रोज़ेदारों की तरह रहना चाहिए। यह रमज़ान शरीफ़ का एहतराम है।

ज़कात का क्या मतलब है

ज़कात के मानी पाकी और सफ़ाई के हैं।

मालदार मुसलमान अपने माल का मुक़र्रर किया चालीसवां हिस्सा अल्लाह की राह में देते हैं, उस माल को ज़कात कहते हैं।

इसको ज़कात इसलिए कहते हैं कि इससे ज़कात निकालने वाले का सारा माल पाक हो जाता है और माल के साथ ख़ुद माल वाले का दिल भी पाक हो जाता है।

जो आदमी ख़ुदा की दी हुई दौलत और नेमत में से ख़ुदा के ग़रीब और मुस्तहिक़ बन्दों का हक़ नहीं निकालता, उसका माल नापाक है, क्योंकि उसका दिल इतना तंग और ख़ुद ग़रज़ है कि जिस ख़ुदा ने उसको असली ज़रूरतों से ज़्यादा देकर उस पर एहसान किया, उसके एहसान का हक़ अदा करते हुए भी उसका दिल दुखता है।

भला ऐसा आदमी जो ख़ुदा की राह में सिर्फ़ अपना माल क़ुरबान करने से हिचकिचाए, उससे क्या उम्मीद की जा सकती है कि वह दीन की ख़ातिर ज़रूरत पड़ने पर अपनी जान की क़ुर्बानी देगा, इसलिए ऐसे आदमी का दिल भी नापाक और वह माल भी नापाक जिसे वह जमा करता है।

सुनिए! ऐसे आदमी के लिए अल्लाह पाक ने क्या ऐलान किया है?

'और वे लोग जो सोना और चांदी जमा करके रखते हैं और उस माल को अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते, उनको दर्दनाक अज़ाब की ख़बर सुना दीजिए।' —पारा 10, सूरः तौबा, रुकूअ़-5, आ०-33

ज़कात अदा करने वालों को ख़ुशख़बरी

'और नमाज़ पढ़ो और ज़कात दिया करो और यक़ीन कर लो जो नेकी तुम अपने लिए करोगे, उसको तुम अल्लाह के यहां पाओगे।' —सूरः बक़रः, रुकूअ़-13

'उन लोगों के माल का हाल, जो अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं, उस दाने जैसा है जो सात बालियां निकाले और हर बाली में सौ दाने हों (यानी एक चीज़ का सवाब सौ गुना) और अल्लाह जिसके लिए चाहता है, इससे भी बढ़ा देता है।' —सूरः बक़रः, रुकूअ़-35

ज़कात में किसका फ़ायदा है

भला यह तो सोचो, ज़कात अदा करने में किसका फ़ायदा है?

क्या ज़कात की रक़म की अल्लाह तआला को ज़रूरत है?

क्या ज़कात की रक़म की ख़ुदा के रसूल पाक को ज़रूरत है?

नहीं, हरगिज़ नहीं।

अगर ऐसा होता तो कम से कम यह हुक्म दिया जाता कि ज़कात की रक़म अल्लाह के घर मस्जिद में लगा दो, या अल्लाह के रसूल को दे दो, उनके ख़ानदान के किसी आदमी को दे दो, मगर ऐसा नहीं किया गया।

हुक्म तो यह है कि अगर मस्जिद के किसी काम में ज़कात की रक़म ख़र्च कर दी जाए तो ज़कात अदा ही न होगी।

अगर जानकर किसी सैयद ज़ादे या हाशमी को ज़कात दी गई तो ज़कात अदा न होगी।

मालूम हुआ कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्ल० को हमारे पैसे की ज़रूरत नहीं।

फिर ज़कात किसके लिए है?

अरे भाई! यह तो अल्लाह पाक का बड़ा करम और एहसान है कि उसने हमारे हाथों से हमारे ग़रीब भाइयों ही को फ़ायदा पहुंचाने का तरीक़ा निकाला है।

ज़रा ग़ौर करो, दुनिया में कितने ऐसे मुफ़्लिस और नादार लोग हैं जिनको दोनों वक़्त पेट भरकर खाना भी नसीब नहीं होता। बहुत से

ऐसे लोग मिलेंगे जो देखने में साफ़-सुथरे लिबास में नज़र आएंगे, मगर उनके घर में खाने को न होगा और दूसरी तरफ़ आपको ऐसे लोग भी नज़र आएंगे जिनके पास माल व दौलत की इतनी ज़्यादती और फ़रावानी होगी कि ख़र्च करने की शक्ल समझ में न आती होगी।

अल्लाह तआला ने इन अमीर मालदारों की दौलत में ग़रीब भाइयों का हिस्सा मुक़र्रर करके कैसा अच्छा निज़ाम बनाया।

अगर सब मालदार मुसलमान अपने माल की पूरी ज़कात की रक़म निकाल कर ग़रीबों और ज़रूरत मंदों पर ख़र्च करते रहें तो कोई ग़रीब मुसलमान नज़र ही न आएगा और इस तरह सबको हंसी-ख़ुशी ज़िंदगी गुज़ारने का मौक़ा मिलेगा।

क्या उम्दा निज़ाम है कि हमारे मालदार भाइयों की जेब से पैसा निकाल कर हमारे ही ग़रीब भाइयों पर ख़र्च हो रहा है, हमारे पैसे से हमको ही फ़ायदा पहुंच रहा है और ख़र्च करने वाले का सवाब (अज्र) अपनी जगह है।

अब तो आप समझ गए होंगे कि अल्लाह तआला को ख़ुद अपने लिए हमारे माल व दौलत की कोई ज़रूरत नहीं, वह तो हमारे माल से हमारी ही मदद कराना चाहते हैं, यही ज़कात का मक़सद है।

लिखाई का काम

ज़कात का मतलब क्या है और ज़कात में किसका फ़ायदा है, ये दोनों सबक़ अच्छी तरह पढ़ने के बाद 'ज़कात' के उन्वान पर अपने लफ़्ज़ों में एक मज़्मून लिखिए, जिसमें नीचे लिखे इशारों के जवाब आ जाएं।

इशारे

ज़कात का क्या मतलब है, ज़कात न देने वालों के बारे में अल्लाह पाक ने क्या फ़रमाया है?

ज़कात अदा करने में किसका फ़ायदा है?

ज़कात क्यों देनी चाहिए?

ज़कात फ़र्ज़ है

इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों में से एक ज़कात है। इसका मानना और इस पर यक़ीन रखना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है और ज़कात अदा करना सिर्फ़ मालदार साहिबे निसाब मुसलमान के लिए ज़रूरी है। जो आदमी ज़कात के फ़र्ज़ होने का इंकार कर दे, वह मुसलमान नहीं।

ज़कात अदा करने की शर्तें

जिस तरह और इबादतें बालिग़ होने के बाद आक़िल समझदार मुसलमान मर्द और औरत पर फ़र्ज़ होती हैं, उसी तरह ज़कात भी फ़र्ज़ होती है।

बच्चा, मजनूं, ग़ुलाम पर ज़कात नहीं है।

ज़कात फ़र्ज़ होने के लिए साहिबे निसाब होना भी शर्त है। ज़कात अदा करने के लिए यह भी ज़रूरी है कि माल अपनी असल ज़रूरत से ज़्यादा हो और उस पर किसी का क़र्ज़ भी न हो।

जिस माल के हासिल होने के बाद आदमी साहिबे निसाब कहलाता है, उस माल पर एक साल गुज़र जाना भी ज़रूरी है।

निसाब और साहिबे निसाब

निसाब माल की उस मिक़्दार को कहते हैं जिसके पास इतना माल हो, जिस माल पर ज़कात फ़र्ज़ होती है।

जैसे किसी के पास 87 ग्राम सोना है। यह मिक़्दार इतनी है कि अगर इसके साथ दूसरी शर्तें पूरी होती हों तो ज़कात फ़र्ज़ है या किसी के पास 612 ग्राम चांदी है, उस पर ज़कात फ़र्ज़ है। अगर किसी के पास इस मिक़्दार का सोना-चांदी तो नहीं है, मगर इतनी मालियत का और कोई तिजारती माल ज़ेवर या नक़्द रुपया है, अपनी असली ज़रूरत से ज़्यादा है, माल वाले पर किसी का क़र्ज़ा भी नहीं है और साल भर गुज़र गया है तो ज़कात फ़र्ज़ है।

सवालात

1. ज़कात फ़र्ज़ होने की क्या शर्तें हैं?
2. निसाब का क्या मतलब है?
3. निसाब वाले किसे कहते हैं?

किस क़िस्म के माल पर ज़कात फ़र्ज़ है?

चांदी, सोना और उससे बनी हुई तमाम चीज़ों पर ज़कात फ़र्ज़ है, चाहे वे ज़ाती इस्तेमाल के लिए हों या तिजारत के लिए, हर क़िस्म की तिजारत के माल पर ज़कात फ़र्ज़ है जबकि उसकी मिक़्दार या क़ीमत सोने या चांदी के निसाब के बराबर हो।

सरकारी नोट और इस क़िस्म का और कोई काग़ज़ जिसकी असल रक़म बैंक में जमा है और जब चाहे उसे केश करा सकते हों, अगर निसाब जितना है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

सवालात

1. किस क़िस्म के माल पर ज़कात फ़र्ज़ है?

2. नक़द रक़म के निसाब का हिसाब किस तरह लगाया जाएगा?

किस क़िस्म के माल पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं

- जवाहरात जो तिजारत के लिए न हों,

- सोना-चांदी के अलावा तांबा, पीतल, अलमूनियम, स्टील वग़ैरह के बर्तन चाहे कितनी क़ीमत के हों, अगर तिजारती नहीं हैं, घरेलू इस्तेमाल के लिए हैं, तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

- मकान या दूकान चाहे कितनी क़ीमत की हों, उसका किराया आता हो, उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

- घर का फ़र्नीचर, कपड़ा, सजावट का सामान, पहनावा, साइकिल, मोटर, रेडियो, रेफ़रीजरेटर, किताबें या इस क़िस्म का और कोई सामान चाहे कितनी क़ीमत का हो, उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, क्योंकि यह सब असली ज़रूरत का सामान है।

- अगर कुछ आदमी मिलकर तिजारत करें जैसे कम्पनी की शक्ल

में तिजारत की जाती है, तो उसमें साल गुज़रने पर हर शरीक के हिस्से की आमदनी देखी जाएगी। अगर उसका हिस्सा ज़कात के निसाब के बराबर पहुंचता है, तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, वरना नहीं।

● कुल मिलाकर अगर कम्पनी का मुनाफ़ा ज़कात के निसाब के बराबर है, तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ न होगी, क्योंकि कम्पनी तो असल में शरीकों का नाम है और हर शरीक पर उसी शक्ल में ज़कात फ़र्ज़ होगी, जब उसका हिस्सा ज़कात की मिक़्दार तक पहुंचता हो।

● हां, अगर किसी एक हिस्सेदार का कई कम्पनियों में हिस्सा है एक कम्पनी या हिस्से की आमदनी तो ज़कात के निसाब को नहीं पहुंचती, मगर कई हिस्सों की आमदनी मिलकर ज़कात के निसाब को पहुंचती है तो इस शक्ल में उस आदमी पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

सवालात

1. क्या सोना-चांदी के घरेलू निजी इस्तेमाल के बर्तन पर ज़कात फ़र्ज़ है?

2. वे कौन-सी चीज़ें हैं जिन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं?

ज़कात किन लोगों को दी जाए?

फ़क़ीर, मिस्कीन, मुसाफ़िर, क़र्ज़दार को

1. फ़क़ीर— उस आदमी को कहते हैं जिसके पास ज़िंदगी गुज़ारने का कुछ थोड़ा बहुत माल व अस्बाब हो और वह ख़ुद 'साहिबे निसाब' न हो।

2. क़र्ज़दार— वह आदमी जिसके ज़िम्मे लोगों का क़र्ज़ हो और

उसके पास क़र्ज़ से बचा हुआ निसाब के बराबर माल न हो, उसको भी ज़कात दी जा सकती है।

3. मिस्कीन— उस आदमी को कहते हैं जिसके पास कुछ भी न हो।

4. मुसाफ़िर— वह आदमी जिसके पास सफ़र में ख़र्च ख़त्म हो गया हो, उसे सफ़र ख़र्च के बराबर ज़कात की रक़म देनी जायज़ है।

सवालात

1. फ़क़ीर और मिस्कीन में क्या फ़र्क़ है?

2. फ़क़ीर और मिस्कीन के अलावा किन लोगों को ज़कात दी जा सकती है?

ज़कात कब अदा करनी चाहिए

जब किसी की मिल्कियत में निसाब जितना आ जाए और उस पर साल गुज़र जाए, तब ज़कात फ़र्ज़ हो जाएगी। साल पूरा होते ही ज़कात अदा कर देनी चाहिए।

अगर साल पूरा होने से पहले पूरा माल या कुछ कम माल ज़ाया हो गया, चोरी हो गया या ख़ुद मालिक ने किसी को दे दिया तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं रही। ज़कात देते वक़्त ज़कात की नीयत ज़रूरी है।

अगर किसी को क़र्ज़ या इनाम के तौर पर कुछ रक़म दी और कुछ दिन के बाद यह नीयत कर ली कि वह मैंने ज़कात की रक़म

अदा कर दी है, तो इस तरह ज़कात अदा न होगी।

आप जिसे ज़कात दे रहे हैं, उसे यह बताना ज़रूरी नहीं है कि यह ज़कात का माल है।

जहां तक मुम्किन हो, ज़कात ख़ामोशी से अदा करनी चाहिए और जिसको ज़कात दी जाए, उस पर किसी क़िस्म का एहसान रखने की क़तई नीयत न हो।

अल्लाह तआला का फ़रमान है, 'ऐ ईमान वालो! तुम एहसान जताकर या तक्लीफ़ पहुंचाकर अपनी ख़ैरात को बर्बाद मत करो।'

—पारा 3, बक़रः, रुकूअ़-3, आ०-265

किसी ख़िदमत के बदले या काम की उजरत में ज़कात देनी जायज़ नहीं है।

किसी ने तिजारत शुरू की और शुरू में उसका माल ज़कात के निसाब को नहीं पहुंचा था, मगर कुछ दिनों बाद मुनाफ़ा हुआ कि माल निसाब के बराबर हो गया तो जिस वक़्त से निसाब पूरा हुआ है, उसी वक़्त से उसके ज़कात के साल की शुरूआत मानी जाएगी और जब साल पूरा होगा, उसे ज़कात अदा करनी होगी।

अगर शुरू में तिजारत का माल दस हज़ार रुपए का था और साल मुकम्मल होने पर मुनाफ़ा होते-होते बीस हज़ार रुपए हो गया, तो ज़कात बीस हज़ार रुपए की देनी होगी।

इसी तरह अगर किसी की मवेशी की तिजारत है, तो साल के आख़िर में जितने जानवरों का इज़ाफ़ा (बढ़ौती) होगा, चाहे पैदावार से हो या ख़रीदारी से, इन सब पर ज़कात अदा करनी होगी।

किसे ज़कात देने में ज़्यादा सवाब है?

सबसे पहले अपने क़रीबी ग़रीब रिश्तेदार जैसे असली या रिश्ते के भाई, बहन-भतीजे, भतीजियां, भांजियां, ख़ाला-ख़ालू, मामूं-मुमानी, सास-ससुर, चाचा-चाची वग़ैरह को।

इसके बाद अपने पड़ोस या मुहल्ले में जो सबसे ज़्यादा हक़दार और ज़रूरतमंद हो, फिर शहर में जो ज़्यादा ज़रूरतमंद हो, उनको ज़कात देने में ज़्यादा सवाब है।

जिसको ज़कात दें, उसे मालिक बना दें, चाहे ज़कात लेने वाले को इसका इल्म हो या न हो कि यह ज़कात की रक़म है, मगर उसके हाथ में पहुंचनी चाहिए।

अगर यह डर हो कि ज़कात लेने वाला ज़कात के नाम से शर्म महसूस करेगा तो किसी तोहफ़े की शक्ल में, बच्चों को ईदी वग़ैरह के नाम से भी हक़ वाले को ज़कात दी जा सकती है।

सवालात

1. ज़कात का हक़दार खोजने में क्या तर्तीब होनी चाहिए?

2. जिसको ज़कात दी जाए क्या उसे बताना ज़रूरी है कि यह ज़कात का माल है?

3. क्या तोहफ़े के नाम से ज़कात दी जा सकती है?

किन लोगों को ज़कात देना जायज़ नहीं है

1. वह मालदार आदमी जिस पर ख़ुद ज़कात फ़र्ज़ हो, उसे ज़कात देना जायज़ नहीं।

2. वह आदमी जिसके पास ऐसा सामान तो नहीं है जिस पर ज़कात फ़र्ज़ होती है, लेकिन उसके घर की ज़रूरत के सामान, बर्तन, फ़र्नीचर वग़ैरह की क़ीमत इतनी हो जाती है जो निसाब के बराबर है, उस आदमी को भी ज़कात देनी जायज़ नहीं।

3. सैयद और बनी हाशिम को ज़कात देनी जायज़ नहीं।

4. मस्जिद के किसी काम में ज़कात की रक़म लगाना जायज़ नहीं।

5. मुर्दे के कफ़न-दफ़न में ज़कात की रक़म नहीं लगाई जा सकती।

6. किसी मुर्दे का क़र्ज़ भी ज़कात की रक़म से अदा नहीं किया जा सकता।

7. ज़कात देने वाला ख़ुद अपनी औलाद को ज़कात नहीं दे सकता। औलाद से मुराद बेटा-बेटी, पोता-पोती, पड़पोता-पड़पोती, नवासा-नवासी और नीचे तक। इसी तरह ज़कात देने वाला अपने मां-बाप, नाना, दादा, पड़नाना, पड़दादा और ऊपर तक किसी को ज़कात नहीं दे सकता।

8. शौहर अपनी बीवी को ज़कात नहीं दे सकता।

बीवी अपने शौहर को ज़कात नहीं दे सकती।

ज़कात अदा करने में यह ज़रूरी है कि किसी आदमी को आप ज़कात के माल का मालिक बनाएं, चाहे लेने वाले को यह इल्म हो या न हो कि यह ज़कात का माल है, मगर यह ज़रूरी है कि मुस्तहिक़ आदमी ख़ुद उसको वसूल करे, इसीलिए मस्जिद में या उसके किसी काम में ज़कात नहीं लगाई जा सकती, क्योंकि मस्जिद में मालिक बनने की सलाहियत नहीं है।

इसी तरह मुर्दे के कफ़न व क़ब्र वग़ैरह में ज़कात नहीं लग सकती, क्योंकि मुर्दा मालिक नहीं बन सकता।

ज़कात किसी ख़िदमत के बदले में भी नहीं दी जा सकती, जैसे किसी मज़दूर से काम लें और मज़दूरी देते वक़्त ज़कात की नीयत कर लें, इस तरह ज़कात अदा नहीं होगी।

इसी तरह किसी मदरसा, इदारा या अंजुमन में ज़कात की रक़म नहीं दी जा सकती।

हां, मदरसे के ग़रीब बच्चों या ऐसे ही किसी भी मुस्तहिक़ आदमी को ज़कात दी जा सकती है।

सवालात

1. किन लोगों को ज़कात की रक़म नहीं दी जा सकती?

2. मस्जिद और मुर्दे के कफ़न में ज़कात की रक़म देना क्यों जायज़ नहीं?

3. क्या मां-बाप अपनी औलाद को ज़कात की रक़म दे सकते हैं?

ज़कात और सदक़े में क्या फ़र्क़ है?

क्या आप समझते हैं कि पांच वक़्त की नमाज़ के फ़र्ज़ अदा करके या साल भर में एक माह के रोज़े रखकर बस अल्लाह पाक की इबादत का हक़ अदा हो गया?

नहीं, ऐसा नहीं है।

अल्लाह की इबादत और बन्दगी में अगर हम ज़िंदगी का हर-हर लम्हा भी लगा दें, वह भी कम है, क्योंकि हमारा दुनिया में आने और ज़िंदा रहने का मक़सद ही इबादत है। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं-- 'मैंने इंसानों और जिन्नों को इसलिए पैदा किया है कि वे इबादत करें।'

यह इबादत किस तरह की जाए? इसकी दो शक्ले हैं--

एक तो अल्लाह तआला की तरफ़ से आमतौर पर भलाई और नेकी करने का हुक्म दिया जाता है, ताकि लोग अपनी ज़िंदगी के हर काम में चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, भलाई का तरीक़ा अख़्तियार करें, इस तरह अल्लाह और रसूल सल्ल० के हुक्म के मुताबिक़ आपका खाना-पीना, चलना-फिरना हर काम इबादत में गिना जाएगा।

फिर इसके अलावा रात-दिन में कुछ ख़ास वक़्त इबादत के लिए मुक़र्रर कर दिए गए, ताकि इंसान इन वक़्तों में ख़ासतौर पर अल्लाह को याद करके अपने ख़्यालों को पाक करे और उसका असर ज़िंदगी पर पड़े।

इन इबादतों में भी आपको दो शक्लें नज़र आएंगी। पांच वक़्त की नमाज़ों में कुछ फ़र्ज़ों का अदा करना तो हर मुसलमान के लिए

लाज़मी क़रार दे दिया गया, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि बस उतनी ही देर आप ख़ुदा को याद करें, बल्कि इसका मक़सद यह है कि कम से कम दिन-रात में पांच वक़्त तो आप ज़िंदगी के हर ज़रूरी से ज़रूरी काम को छोड़कर अल्लाह की याद में लग जाएं और उसके बाद आम हुक्म में नफ़्ली नमाज़ें हैं।

इसमें आपको अख़्तियार है कि आप जिस क़दर अल्लाह पाक के ताल्लुक़ और उसकी ख़ुश्नूदी के ख़्वाहिशमंद हों, उतनी नफ़्ल नमाज़ें पढ़ें।

यही हाल रोज़े का है, साल भर में एक माह के रोज़े रखने तो हर मुसलमान मर्द, और औरत पर फ़र्ज़ हैं, इससे इंकार या बग़ैर शरई मजबूरी के फ़रार तो मुम्किन ही नहीं।

अब इसके बारे में अख़्तियार है, आप जुमेरात, जुमा, यौमे आशूरा, शबे मेराज, शबेबरात और चाहे जितने नफ़्ली रोज़े रखें, इसी तरह हज और यही हाल ज़कात का है।

अगर आप साहबे निसाब हैं, तो अपने माल का चालीसवां हिस्सा तो ज़रूर ही ख़ुदा की राह में लगा देंगे, जो फ़र्ज़ है। इसके बाद हुक्म यह है कि बुख़्ल और तंगदिली से बचो। अगर अल्लाह तआला ने तुम्हें इतना दिया है कि अह्ल व अयाल की वाक़ई ज़रूरतें और ज़कात अदा करके बचता रहे, तो जो कुछ ख़ुदा की राह में ख़र्च कर सकते हो, कर दो। जिस ख़ुदा ने तुम्हारे ऊपर अपनी नेमतों के दरिया बहाए हैं, उसकी मज़्लूम और मज़दूर मख़्लूक़ की ज़रूरतें पूरी करके अल्लाह की सच्ची मुहब्बत का सबूत दो।

अगर तुम वाक़ई अल्लाह से मुहब्बत रखते हो तो माल की मुहब्बत को ख़ुदा की मुहब्बत पर क़ुरबान कर दो।

अपने माल का चालीसवां हिस्सा अदा करने के ख़ास हुक्म को ज़कात कहते हैं।

और आमतौर पर ग़रीब ज़रूरतमंदों पर ख़र्च करना सदक़ा और ख़ैरात कहलाता है।

सदक़ा फ़ित्र के अलावा और किसी सदक़ा ख़ैरात का वक़्त मुक़र्रर नहीं है जब मौक़ा हो, ख़र्च कर देना चाहिए।

सवालात

1. क्या इबादत का तरीक़ा सिर्फ़ रोज़ा, नमाज़, हज और ज़कात ही है। या इसके अलावा भी किसी तरह इबादत की जा सकती है?

2. ज़कात और सदक़े में क्या फ़र्क़ है?

3. फ़र्ज़ और नफ़्ल इबादत में क्या फ़र्क़ है?

सदक़ा फ़ित्र

वह सदक़ा (ख़ैरात) जो रमज़ान के ख़त्म होने पर रोज़ा ख़ुल जाने की ख़ुशी और शुक्रिया के तौर पर अदा करें, उसे सदक़ा फ़ित्र कहते हैं।

सदक़ा फ़ित्र किन लोगों पर वाजिब है?

सदक़ा फ़ित्र उन्हीं मुसलमान मर्दों और औरतों पर वाजिब है जिन पर ज़कात फ़र्ज़ है।

जिस तरह ज़कात साहिबे निसाब पर फ़र्ज़ होती है, उसी तरह सदक़ा फ़ित्र भी साहिबे निसाब पर वाजिब होता है।

मगर ज़कात के साहिबे निसाब और सदक़ा फ़ित्र के साहिबे निसाब में थोड़ा-सा फ़र्क़ है।

ज़कात के माल में तो वही माल हिसाब में लाया जाता है, जो सोने-चांदी का हो या तिजारती हो, मगर सदक़ा फ़ित्र इन तीनों बातों की ख़ुसूसियत नहीं, बल्कि सदक़ा फ़ित्र के निसाब में हर क़िस्म का माल हिसाब में ले लिया जाता है, हां, असली ज़रूरत और क़र्ज़ से बचा हुआ होना चाहिए।

इसलिए अगर किसी के पास अपने इस्तेमाल के कपड़े या रोज़ाना इस्तेमाल से ज़्यादा बर्तन रखे हों, फ़र्नीचर अगर रखा हो, इसके अलावा और कोई चीज़ जो रोज़ाना की ज़रूरत में न आती हो और उसकी क़ीमत 612 ग्राम चांदी या 87 ग्राम सोने के बराबर है तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी, मगर सदक़ा फ़ित्र वाजिब होगा।

इसके अलावा ज़कात फ़र्ज़ होने के लिए ज़रूरी है कि निसाब के बराबर माल पर एक साल भी गुज़र जाए, मगर सदक़ा-फ़ित्र के लिए यह भी ज़रूरी नहीं। अगर कोई आदमी उसी दिन निसाब के बराबर मालिक हुआ है तो उस पर सदक़ा-फ़ित्र वाजिब है। अपनी छोटी नाबालिग़ औलाद की तरफ़ से मां-बाप सदक़ा-फ़ित्र अदा करें। यह ज़रूरी नहीं कि जो रोज़ा रखे, वही सदक़ा-फ़ित्र अदा करे, नहीं, बल्कि सदक़ा-फ़ित्र सबको अदा करना वाजिब है।

हां, जो नाबालिग़ बच्चे अपने मां-बाप की सरपरस्ती में गुज़र-बसर करते हैं, उनकी ज़िम्मेदारी उनके मां-बाप पर है।

अगर नाबालिग़ बच्चों के पास अपना माल है तो उनके माल में से अदा करना चाहिए।

सदक़ा फ़ित्र की मिक़्दार

नाम जिंस	किलो	ग्राम	या उसकी क़ीमत
गेहूं या आटा	1	630	
जौ या आटा	3	267	
सत्तू	3	267	

अगर नक़द देना चाहें या ग़ल्ले के अलावा कपड़ा, बर्तन वग़ैरह देना चाहें तो एक किलो 630 ग्राम गेहूं या 3 किलो 267 ग्राम जौ की क़ीमत के बराबर दे दें।

अलग-अलग शहरों में ग़ल्ला की क़ीमतें अलग-अलग रहती हैं। इसी तरह ग़ल्ला की उम्दा और मालूम क़िस्म के लिहाज़ से भी क़ीमतें

घटती-बढ़ती रहती हैं, इसलिए यह उसूल सामने रखना चाहिए कि जो आदमी जिस क़िस्म और जिस क़ीमत का ग़ल्ला ख़ुद आमतौर पर खाता है, उसकी क़ीमत का हिसाब सदक़ा फ़ित्र में लगाना चाहिए।

सदक़ा-फ़ित्र भी उन्हीं लोगों को दिया जाता है जिनको ज़कात दी जाती है।

सदक़ा-फ़ित्र ईदुल फ़ित्र की फ़ज्र निकलने पर वाजिब होता है, इसलिए जो आदमी फ़ज्र तलू होने से पहले मर जाए उस पर सदक़ा-फ़ित्र वाजिब नहीं।

जो आदमी ईदुल फ़ित्र की सुबह फ़ज्र के बाद माल का मालिक बने या कोई ग़ैर-मुस्लिम मुसलमान हो या बच्चा फ़ज्र के बाद पैदा हो, उस पर सदक़ा फ़ित्र वाजिब है।

सदक़ा फ़ित्र वाजिब होने के लिए रमज़ान में रोज़ेदार रहना ज़रूरी नहीं है। अगर किसी ने मजबूरी से रोज़े नहीं रखे या बच्चा कम उम्र है तो उस पर सदक़ा फ़ित्र वाजिब होगा।

अगरचे सदक़ा फ़ित्र फ़ज्र के तुलू के बाद वाजिब होता है, मगर रमज़ान में या रमज़ान से पहले भी अदा करना जायज़ है। अपने शहर के अलावा दूसरे शहर में सदक़े की रक़म भेजना जायज़ है।

सवालात

1. सदक़ा फ़ित्र किन लोगों पर वाजिब होता है?

2. क्या सिर्फ़ रोज़ेदार पर ही सदक़ा फ़ित्र वाजिब है या हर साहिबे निसाब पर?

3. ज़कात और सदक़ा फ़ित्र में क्या फ़र्क़ है?

4. सदक़ा फ़ित्र की क्या मिक़्दार है?

ज़मीन की पैदावार में दसवां हिस्सा

हर वह ज़मीन, जिसको नदी या वर्षा के पानी से सींचा जाए और उसमें ख़रीदने-बेचने के क़ाबिल चीज़ें ख़ुद बोई गई हों, जैसे अनाज, फल, तरकारियां, बेचने के क़ाबिल कपास, दवाएं, जड़ी बूटियां वग़ैरह।

ऐसी ज़मीन में पैदावार का दसवां हिस्सा ज़कात फ़र्ज़ है, इसको उश्र कहते हैं।

इसमें यह ज़रूरी शर्त है कि पैदा होने वाली चीज़ एक साअ़ यानी 3 किलो 260 ग्राम से कम न हो।

और वह ज़मीन जो बारिश या नदी के पानी से न सींची जाए, बल्कि कुंएं या टयूब वेल या किसी तरह के ख़रीदे हुए पानी से सींची जाए, उसमें पैदावार का बीसवां हिस्सा देना फ़र्ज़ है, जैसे अगर किसी की ज़मीन में 20 क्विंटल अनाज पैदा हुआ और वह ज़मीन बारिश या नदी से सींची गई है तो क्विंटल अनाज उश्र में देना होगा। (यह उसकी ज़कात है) और अगर ज़मीन, कुंएं वग़ैरह से सींची गई है तो यह ग़ल्ला उश्र में देना होगा।

इसी तरह फल और तरकारियों का हिसाब लगाया जाएगा।

अगर कोई ज़मीन दोनों क़िस्म के पानी से सींची जाती है तो उसमें अक्सर (ज़्यादा) का एतबार होगा, अगर ज़्यादातर नदी के पानी से सींची गई है तो उश्र देना होगा।

और अगर ज़्यादातर कुंएं या ख़रीदे हुए पानी से सींची गई है तो बीसवां हिस्सा देना होगा।

अगर दोनों क़िस्म के पानी बराबर हैं, तब भी बीसवां हिस्सा ही देना होगा।

बे-क़ीमत और ख़ुद पैदा होने वाली चीज़ों पर ज़कात नहीं है। जिस चीज़ की जिस जगह क़द्र होती है, बेची जाती है, वहां उस पर उश्र होगा, जहां उसकी क़द्र नहीं होती, ख़रीदने-बेचने के क़ाबिल नहीं समझी जाती, वहां उस पर उश्र न होगा।

ज़मीन की पैदावार पर साल गुज़रना या साल पर एक बार देना नहीं है, बल्कि हर फ़स्ल पर उश्र अदा करना होगा, चाहे किसी चीज़ की साल में दो फ़स्लें हों या तीन।

पैदावार पर दसवां हिस्सा अदा करने के ये तमाम मसले उस ज़मीन के बारे में हैं, जो उश्री ज़मीन हो।

उश्री और ख़राज़ी ज़मीन का फ़र्क़ तो आप तफ़सील से बड़ी किताबों में पढ़ेंगे, यहां मुख़्तसर यों समझ लीजिए कि उश्री ज़मीन वह कहलाती है जिसका मालिक मुसलमान हो और मुसलमान मालिक को अपने इल्म के मुताबिक़ यह यक़ीन हो कि यह ज़मीन पहले से मुसलमानों के पास चली आ रही है।

सवालात

1. कौन-सी ज़मीन पर दसवां हिस्सा देना फ़र्ज़ है?

2. कौन-सी ज़मीन पर बीसवां हिस्सा देना फ़र्ज़ है?

3. कम से कम कितनी पैदावार पर उश्र है?

4. अगर किसी के बाग़ में या एक बाग़ में 40 क्विंटल आम पैदा हुए तो उश्र में कितने आम देने होंगे?

5. क्या ख़ुद पैदा होने वाली चीज़ों पर ज़कात है?

6. उश्री ज़मीन का क्या मतलब है?

गाय-भैंस की ज़कात

वह गाय-भैंस, जो तिजारत के लिए बल्कि शौक़िया पाली गई हो और साल के ज़्यादातर हिस्से में जंगल में चरती हो, बहुत कम मालिक के दाने-चारे पर गुज़र करती हो, उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

गाय-भैंस की ज़कात का निसाब

गाय-भैंस की 29 की तायदाद तक ज़कात नहीं हैं

30 पर साल में एक साल की गाय या भैंस का एक बच्चा ज़कात में देना होगा।

39 तक यही ज़कात रहेगी।

40 पर दो साल की उम्र की गाय या भैंस का एक बच्चा।

59 तक यही ज़कात रहेगी।

60 की तायदाद पर एक-एक साल के दो बच्चे।

69 तक यही ज़कात रहेगी।

70 पर एक साल का एक बच्चा, दो साल का एक बच्चा।

80 पर दो-दो साल के दो बच्चे।

90 पर एक-एक साल के तीन बच्चे।

100 की तायदाद होने पर एक-एक साल के दो बच्चे, दो साल का एक बच्चा।

अगर गाय-भैंस तिजारत की नीयत से ख़रीद कर पाली जाएं, तो उनकी ज़कात सोने-चांदी के निसाब से अदा करनी होगी। गाय और भैंस दोनों एक हुक्म और एक क़िस्म में दाख़िल हैं, दोनों का निसाब एक है।

अगर किसी के पास बीस गाएं और दस भैंसें हो तो कुल मिलाकर तीस का निसाब पूरा हो जाएगा, मगर ज़कात में वही जानवर दिया जाएगा जिसकी जायदाद ज़्यादा होगी।

अगर किसी गाय-भैंस के बच्चे तंहा हों तो उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। अगर उनके साथ कोई एक बड़ा जानवर भी हो तो ज़कात फ़र्ज़ है।

बकरी-भेड़ की ज़कात

वे भेड़-बकरियां जो तिजारत की नीयत से नहीं, बल्कि शौक़ में पाली गई हों और साल के ज़्यादा हिस्सों में जंगल में चरती हों, उन पर ज़कात फ़र्ज़ है।

39 भेड़ बकरियों की तायदाद तक ज़कात नहीं है।

40 पर एक साल की उम्र की एक बकरी या बकरा या भेड़ ज़कात में दी जाएगी।

120 की तायदाद तक यही ज़कात रहेगी।

121 से 200 तक साल में दो बकरियां एक-एक साल उम्र की।

201 पर तीन बकरियां हर साल ज़कात में देनी होंगी।

399 तक यही तायदाद रहेगी।

400 पर हर साल चार बकरियां।

और फिर हर सौ पर एक बकरी बढ़ती जाएगी।

अगर भेड़-बकरियां तिजारत की नीयत से ख़रीद कर पाली जाएं तो उनकी ज़कात सोने-चांदी के हिसाब से अदा करनी होगी।

ज़कात के बारे में बकरी, भेड़, दुंबा सब बराबर हैं।

अगर दोनों, तीनों क़िस्म के जानवर मिलाकर निसाब पूरा होता है, तो ज़कात फ़र्ज़ होगी, मगर ज़कात में वही जानवर दिया जाएगा जिसकी तायदाद ज़्यादा होगी।

हज

अल्लाह पाक की मुहब्बत है तो ज़रा बदन को तक्लीफ़ दो, कुछ माल ख़र्च करो और जहां यह हुक्म आए कि अब माल और बदन दोनों की ज़रूरत है, तो उसके लिए भी फ़ौरन सर झुका दो।

यही मुसलमान का फ़र्ज़ है और इसी का नाम सच्ची इबादत है।

रोज़ा और नमाज़ में सिर्फ़ बदन को तक्लीफ़ देनी होती है, इसलिए यह दोनों बदनी इबादतें कहलाती हैं।

ज़कात में सिर्फ़ पैसा ख़र्च करना पड़ता है, इसलिए यह माली इबादत है।

हज में अपने जिस्म को भी तक्लीफ़ देनी पड़ती है, पैसा भी ख़र्च होता है, इसलिए इस इबादत को माली और बदनी इबादत कहते हैं। हज के बारे में अल्लाह पाक का हुक्म यह है–

'अल्लाह की तरफ़ से लोगों के लिए यह बात ज़रूरी हो गई है कि अगर उस तक पहुंचने की ताक़त पाएं तो उस घर का हज करें और जो कोई उसका इंकार करे तो याद रखो अल्लाह की ज़ात तमाम दुनिया से बे-परवा है।' –पारा 4, रु० 1, सूरः आले इम्रान, आयत 97

हज किन लोगों पर फ़र्ज़ है?

हज हर उस मुसलमान आक़िल बालिग़ मर्द व औरत पर फ़र्ज़ है जिसके पास इतना रुपया हो कि मक्का मुअज़्ज़मा तक पहुंच सके और वापस आ सके और रास्ता हिफ़ाज़त वाला हो, तन्दुरुस्त हो, इतना सफ़र ख़र्च रखता हो कि आसानी से सफ़र हो सके और जिन रिश्तेदारों की परवरिश उसके ज़िम्मे है उनके लिए ख़र्च छोड़ सके। औरत के लिए यह भी शर्त है कि ख़ाविंद साथ हो या कोई ऐसा मर्द साथ हो जिसके साथ उस औरत का निकाह हराम हो।

सवालात

1. हज माली इबादत है या बदनी?
2. हज किन लोगों पर फ़र्ज़ है?
3. औरत के लिए ख़ास शर्त क्या है?

हज की क़िस्में

हज तीन नीयतों के साथ तीन तरीक़े से किया जाता है—

1. इफ़राद— इफ़राद उस हज को कहते हैं जिसमें सिर्फ़ हज की नीयत से एहराम बांधा जाता है।

2. क़िरान— उस हज को कहते हैं जिसमें हज और उमरा दोनों की नीयत से एहराम बांधा जाता है।

3. तमत्तोअ— उस हज को कहते हैं जिसमें हज के महीने में पहले उमरा का एहराम बांधा जाता है, फिर उमरा का काम पूरा

करके हलाल हो जाते हैं और उसी साल फिर हज का एहराम बांध लेते हैं। इन तीनों तरीक़ों से हज अदा हो जाता है।

सवालात

1. हज की तीन क़िस्मों के नाम बताइए?
2. हज की तीनों क़िस्मों में क्या फ़र्क़ है?

हज सही होने के लिए ज़रूरी है

हज के दिनों का होना, ज़िलहिज्जा की ख़ास तारीख़ों के अलावा किसी महीने में हज नहीं हो सकता।

हज की नीयत से एहराम बांधना शर्त है।

ज़िलहिज्जा की 9 तारीख़ को अरफ़ात के मैदान में ठहरना फ़र्ज़ है, चाहे थोड़े वक़्त के लिए हो।

तवाफ़े ज़ियारत करना फ़र्ज़ है।

क़ुरबानी करने और बाल कटवाने के बाद मक्का मुकर्रमा आकर जो तवाफ़ किया जाता है, उसे तवाफ़े ज़ियारत कहते हैं।

इस तवाफ़ का वक़्त 10 ज़िलहिज्जा की सुबह से 12 तारीख़ तक रहता है, मगर 10 को अदा कर लेना बेहतर है।

हज में कौन-से काम वाजिब हैं?

1. मुज़दलफ़ा में ठहरना,
2. सफ़ा और मर्वा की सई करना,

3. तीनों जमरात पर कंकड़ियां मारना,

4. सर मुंडाना या बाल कटवाना,

5. बाहर से आने वालों के लिए चलते वक़्त तवाफ़े विदाअ़ करना,

6. हज क़िरान व तमत्तोअ़ वालों के लिए क़ुरबानी करना,

एहराम किसे कहते हैं?

मक्का मुकर्रमा के चारों तरफ़ कुछ जगहें मुक़र्रर हैं जिन्हें मीक़ात कहते हैं।

हर मुल्क के हाजी के लिए जो मीक़ात मुक़र्रर है उस जगह से उसे बिना सिले कपड़े पहनकर एहराम शुरू कर देना चाहिए, बग़ैर एहराम बांधे मीक़ात के आगे गुज़र जाना सख़्त गुनाह है।

हिन्दुस्तान से जाने वाले हाजियों के लिए यलमलम का मक़ाम मीक़ात है।

जद्दा आने से पहले जब यह जगह आती है तो एलान कर दिया जाता है और हाजी लोग ग़ुस्ल करके एहराम बांध लेते हैं।

एहराम से पहले ग़ुस्ल करना मुस्तहब है, सवाब है।

एहराम बांधने का तरीक़ा

मीक़ात आने से पहले हाजी सफ़ाई करे, बाल कटवाए, ग़ुस्ल या वुज़ू करे, ख़ुश्बू लगाए और साफ़ सफ़ेद नए या पुराने कपड़े पहने जिसमें एक तहबंद और बग़ैर सिली चादर दो कपड़े होने चाहिएं।

मर्द के एहराम में दो कपड़े होते हैं और औरत अपना लिबास पहन सकती है।

इसके बाद दो रक्अत नफ़्ल नमाज़ अदा करे और हज या उमरा या दोनों की नीयत करे, फिर यह दुआ मांगे—

'ऐ अल्लाह! मैं हज का इरादा करता हूं, इसको मेरे लिए आसान फ़रमा और क़ुबूल फ़रमा, फिर तलबिया पढ़े।

तलबिया क्या है?

ये वह कलिमे हैं जिनके ज़रिए हाजी अल्लाह पाक की बारगाह में अर्ज़ करता है 'हाज़िर हूं ऐ अल्लाह! मैं तेरी बारगाह में हाज़िर हूं, हाज़िर हूं, तेरा कोई शरीक नहीं है, हाज़िर हूं तमाम तारीफ़ें और नेमतें और सारा मुल्क तेरे लिए है, तेरा कोई शरीक नहीं।'

तलबिया की इबादत

'लब्बैक, अल्लाहुम-म लब्बैक लब्बैक ला शरी-क ल-क लब्बैक इन्नल हम-द वन-ने-अ़-म-त ल-क वल-मुल-क ला शरी-क ल-क'

इस तरह हाजी की एहराम की हालत शुरू हो जाती है और इस हालत में हर क़िस्म की बुरी बातें, लड़ाई-झगड़ा मना है। मर्द को तलबिया के कलिमे ज़ोर से कहने चाहिएं, औरत धीरे कहे।

तहलील— कलिमा 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' पढ़ने को 'तहलील' कहते हैं।

एहराम की हालत में किन कामों से रोका गया

1. लड़ाई-झगड़ा, क़त्ल व ग़ारतगरी करना मना है।
2. कुरता, पजामा या इस तरह का और कोई सिला हुआ कपड़ा

पहनना मना है।

3. किसी ख़ुशबूदार चीज़ का इस्तेमाल करना मना है।

4. मर्दों के लिए चेहरा और सर ढांकना, और औरतों के लिए सिर्फ़ चेहरा ढांकना मना है।

5. जिस्म के किसी हिस्से के बाल कटवाना या ख़ुद काटना, मूंडना, नाख़ून वग़ैरह कतरना मना है।

6. ख़ुद शिकार करना या शिकारी की मदद करना, किसी जानवर को ज़िब्ह करना, मारना मना है।

7. किसी तरीक़े से भी नफ़सानी ख़्वाहिश को पूरा करना मना है। औरतें सिला हुआ कपड़ा पहन सकती हैं, उनको सिर्फ़ चहरे पर कपड़ा न डालना चाहिए।

सवालात

1. मीक़ात किसे कहते हैं?
2. एहराम में कितने कपड़े होते हैं?
3. औरत मर्द के एहराम में क्या फ़र्क़ है?
4. एहराम बांधने का क्या तरीक़ा है?
5. एहराम की हालत में कौन-से काम मना हैं?

तवाफ़ क्या है?

तवाफ़ के मानी हैं चक्कर लगाना। काबा के चारों तरफ़ इबादत की नीयत से चक्कर लगाने को तवाफ़ कहते हैं।

काबे की ख़ास इबादत यही है जो और किसी जगह नहीं हो सकती। तवाफ़ का ख़ास तरीक़ा यह है—

- सबसे पहले तवाफ़ करने वाला हजरे अस्वद के सामने खड़ा हो और तवाफ़ की नीयत करके नमाज़ की तरह दोनों हाथ कानों तक उठाए। हाथ की हथेलियां क़िब्ले की तरफ़ करना मुस्तहब है।
- फिर हाथ छोड़कर हजरे अस्वद को चूमे, इसके बाद दाहिनी तरफ़ चले और दुआएं पढ़ता रहे।
- जब पूरे काबा का चक्कर लगाकर हजरे अस्वद पर आए तो पहले की तरह हजरे अस्वद को चूमे, मगर हाथ न उठाए।
- अगर क़रीब पहुंचने का मौक़ा न मिले तो दूर से हाथ उठाए और हथेलियों का रुख़ हजरे अस्वद की तरफ़ करके हाथों को चूमे। यह एक चक्कर पूरा हो गया, इसी तरह सात चक्कर पूरे कर ले।
- फिर मक़ामे इब्राहीम पर आकर दो रक्अत नफ़्ल पढ़े। यह तवाफ़े क़दूम मुकम्मल हो गया।
- इसके बाद मुलतज़िम पर आए और ख़ूब दुआ मांगे।
- फिर ज़मज़म पर आए और क़िब्ला रुख़ होकर पानी पिए, दुआ मांगे। यह तवाफ़ क़दूम का तरीक़ा है।

तवाफ़े ज़ियारत— 10 तारीख़ से मिना में क़ुरबानी करने वाले

कंकड़ियां मारने के बाद हाजी लोग मक्का आते हैं और तवाफ़ करते हैं। इस तवाफ़ को तवाफ़े ज़ियारत कहते हैं। इस तवाफ़ के बाद फिर मिना जाना होता है, जहां 11-12 दोनों दिन क़ियाम किया जाता है।

तवाफ़े विदाअ़— मक्का मुअज़्ज़मा में हज के तमाम कामों से फ़ारिग़ होने के बाद जब यहां से रुख़्सत होने का इरादा होता है तो एक आख़िरी तवाफ़ किया जाता है, इसे तवाफ़े विदाअ़ कहते हैं।

सवालात

1. तवाफ़ का क्या मतलब है?
2. तवाफ़ का क्या तरीक़ा है?
3. तीनों तवाफ़ों के वक़्त क्या हैं?

हज और उमरे में फ़र्क़

वैसे तो हज और उमरा में लगभग एक से अरकान अदा किए जाते हैं। कुछ बातें ऐसी हैं जो उमरे में नहीं होतीं। नीचे के नक़्शे में हज और उमरा का फ़र्क़ आसानी से समझा जा सकता है।

हज	उमरा
मुक़र्ररा दिनों में अदा किया जाता है।	साल में कभी भी अदा किया किया जा सकता है।
फ़र्ज़ है	फ़र्ज़ नहीं है।

- एहराम बांधना दोनों में ज़रूरी है
- एहराम के फ़र्ज़, वाजिब, सुन्नतें दोनों में एक जैसे हैं।

- एहराम को तोड़ने वाली बातें दोनों में एक जैसी हैं।
- तवाफ़े क़दूम दोनों में एक जैसा है।
- बाल मुंडवाना या कटवाना दोनों में एक जैसा है।
- तवाफ़े ज़ियारत दोनों में है।
- सफ़ा-मर्वा में दौड़ना दोनों में ज़रूरी है।
- तवाफ़ विदाअ़ सिर्फ़ हज में
- मुज़दलफ़ा में ठहरना हज में
- अरफ़ात में ठहरना हज में
- कंकड़ियां मारना हज में
- दो नमाज़ों का मिलाना हज में
- मीक़ात अलग-अलग जगहों से आने वालों के लिए अलग-अलग

हज की कुछ इस्तिलाहें (ख़ास लफ़्ज़)

1. **सई**— सफ़ा और मर्वा दो पहाड़ों के दर्मियान दौड़ना, (अब सफ़ा और मर्वा पहाड़ों की शक्ल में नहीं हैं, ज़रा ऊंची सड़कें हैं।)

2. **रम्यि जमरात**— शैतान को तीन जगहों पर कंकड़ियां मारना,

3. **वक़ूफ़े अरफ़ात**— अरफ़ात के मैदान में ठहरना,

4. **शौत**— तवाफ़ का एक चक्कर,

5. **रमल**— ज़रा तेज़ी से चलना,

6. **इस्तिलाम**— जब हजरे अस्वद के बारे में इस्तिलाम हो तो

इसके मानी हैं हजरे अस्वद का बोसा लेना (चूमना) और रुकने यमानी के लिए बोला जाए, तो मानी होते हैं सिर्फ़ छू लेना।

7. जनायत— एहराम की हालत में ऐसी ग़लती करना जिस पर क़ुरबानी करनी ज़रूरी होती है।

8. इज़्तिबाअ़— एहराम की हालत में चादर का इस तरह ओढ़ना कि एक सिरा दाहिने कांधे से उतार कर दाहिनी बग़ल से निकाल कर बाएं कांधे पर डाल लिया जाए।

कुछ अहम जगहों का परिचय

मुल्तज़िम— काबा शरीफ़ की दीवार का वह हिस्सा जो काबा के दरवाज़े और हजरे अस्वद के दर्मियान है।

सफ़ा-मर्वा— उन दो पहाड़ियों के नाम हैं जो काबा के क़रीब हैं। इन पर हज़रत हाजरा अलैहिस्सलाम दौड़कर जाती थीं, ताकि अपने लिए और अपने बेटे इस्माईल के लिए पानी तलाश करें।

अब ये पहाड़ियों की शक्ल में नहीं हैं, बल्कि कुछ ऊंचे ख़ूबसूरत रास्ते हैं जिन पर हाजी लोग दौड़ते या तेज़ी से चलते हैं, इसी को सई कहते हैं।

हजरे अस्वद— एक काला पत्थर है जो काबा के पूर्वी किनारे पर लगा हुआ है। यह पत्थर जन्नत से आया था। हर हाजी तवाफ़ करते वक़्त इसको बोसा देता है। ख़ाना काबा का तवाफ़ इसी पत्थर से शुरू और इसी पर ख़त्म होता है।

ज़मज़म— हरम काबा के क़रीब एक कुवां है जो बीबी हाजरा और उनके बेटे हज़रत इस्माईल के लिए अल्लाह तआला ने जारी फ़रमाया था। पहले चश्मे की शक्ल में था, फिर कुवां बना दिया गया। अब इस पर ख़ूबसूरत इमारत बना दी गई है।

मक़ामे इब्राहीम— यह काबा की इमारत के क़रीब एक ख़ूबसूरत कमरे में एक पत्थर है। इसके बारे में कई तारीख़ें मिलती हैं—

एक यह कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम जब काबे की दीवारें तामीर कर रहे थे, तो इसी पत्थर पर खड़े होकर दीवार चुनते जाते थे और ज़रूरत के मुताबिक़ यह पत्थर ख़ुद ऊंचा होता जाता था।

दूसरी तारीख़ यह कि जब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम अपने बेटे हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम से मिलने आते थे तो अपनी ऊंटनी से इसी पत्थर पर उतरते थे।

हर तवाफ़ ख़त्म करने के बाद इस मुक़ाम के क़रीब दो रक्अत नफ़्ल नमाज़ अदा की जाती है।

रुकने यमानी— ख़ाना काबा के जुनूबी-मग़रिबी (दक्षिणी-पश्चिमी) कोने को रुकने यमानी कहते हैं।

हतीम— काबा के क़रीब एक छोटी-सी दीवार है जो पहले काबा में शामिल थी, बाद में शामिल नहीं की गई, मगर उसकी इज़्ज़त व अज़्मत भी काबा जैसी की जाती है और तवाफ़ करते वक़्त इसको भी शामिल किया जाता है।

मीज़ाबे रहमत— यह वह परनाला है जिससे ख़ाना काबा की छत से बारिश का पानी गिरता है।

मिना— यह मक्का मुअज़्ज़मा से लगभग तीन मील दूर एक जगह है, जहां 8 ज़िलहिज्जा को दिन भर हाजी लोग क़ियाम करते हैं।

जबले रहमत— अरफ़ात के मैदान के दर्मियान एक पहाड़ है, इसे जबले रहमत कहते हैं।

अरफ़ात— यह मिना की घाटी से लगभग छः मील दूर एक मैदान है, 9 ज़िलहिज्जा की सुबह हाजी लोग इस मैदान में पहुंचते हैं, इस मैदान में पहुंच जाना ही हज का असली काम है।

हज्जे बदल

हज्जे बदल का मतलब यह है कि जिस औरत या मर्द पर हज फ़र्ज़ हुआ हो, वह ख़ुद न जाए, बल्कि अपनी तरफ़ से किसी दूसरे आदमी को भेज दे। यह हज्जे बदल कहलाता है। और इस तरीक़े से भी फ़र्ज़ अदा हो जाता है, अगर इसकी तमाम शर्तें पूरी कर ली जाएं।

इसके लिए ज़रूरी बातें ये हैं—

- जो आदमी अपनी तरफ़ से दूसरे आदमी को भेजना चाहता है, वह इतना बूढ़ा हो गया हो कि कमज़ोरी की वजह से ख़ुद जाने की ताक़त न हो, अंधा हो गया हो।
- किसी वजह से पैर कट गया हो या ऐसी बड़ी बीमारी हो गई हो जिससे शिफ़ा हासिल होने की उम्मीद नहीं रही।

इस हालत में हज्जे बदल (बदले का हज) कराया जा सकता है।

अब जो आदमी किसी की तरफ़ से हज्जे बदल करने जा रहा है, उसको एहराम बांधते वक़्त नीयत करनी चाहिए कि मैं फ़्लां आदमी की तरफ़ से एहराम बांध रहा हूं।

जिसकी तरफ़ से हज किया जाए, वही उसके पूरे ख़र्चे अदा करे।

जो आदमी हज कर रहा है, वह सिर्फ़ एक ही आदमी की तरफ़ से हज करने की नीयत करे।

हज करने वाला हज के तमाम अरकान अदा करे। अगर किसी ग़लती से हज फ़ासिद हो गया तो जिसकी तरफ़ से हज्जे बदल किया जा रहा है, उसे दोबारा करना होगा।

हज कराने वाले ने जिस क़िस्म की हिदायत की हो, यानी इफ़राद, तमत्तोअ़, क़िरान, उसी नीयत से हज करे।

अगर किसी पर हज फ़र्ज़ हुआ, मगर वह ज़िंदगी में नहीं कर सका और मरते वक़्त किसी को वसीयत कर गया तो उसकी तरफ़ से हज किया जा सकता है।

अगर वसीयत न भी की हो, तो किसी भी मैयत की तरफ़ से हज कराया जा सकता है।[1]

---

1. यहां सिर्फ़ हज्जे बदल के तआरुफ़ (परिचय) की हद तक बातें लिखी गई हैं, इसके आगे के मसले हालात के मुताबिक़ सनद हासिल किए हुए उलेमा से मालूम किए जाएं।

ख़ुदा का फ़रमान

अल्लाह के ख़ास बन्दे

'और अल्लाह के ख़ास बन्दे वे हैं जो ज़मीन पर आजिज़ी और इंकिसारी के साथ चलते हैं और जाहिल नादान लोग उनसे जिहालत की बातें करते हैं तो वे उनको सलामती की दुआएं देकर अलग हो जाते हैं।'

—सूरः फ़ुरक़ान, पा० 19, रुकूअ़ 3

अच्छे आदमी बेहूदा कामों से अलग रहते हैं

(और अल्लाह के ख़ास बन्दे वे हैं) जो बेहूदा बातों में शामिल नहीं होते (और अगर कभी इत्तिफ़ाक़ से) बेहूदा कामों के क़रीब से गुज़रते हैं, तो संजीदगी के साथ गुज़र जाते हैं।

—सूरः फ़ुरक़ान, पा० 19, रुकूअ़ 3

सच्चे अमानतदार बनो, इंसाफ़ के साथ फ़ैसला करो

बेशक अल्लाह तआला तुमको इस बात का हुक्म देता है कि अमानत वालों की अमानतें (जब वे तलब करें तो ज्यों की त्यों) उनके हवाले कर दिया करो और जब लोगों के आपसी झगड़ों का फ़ैसला करने लगो, तो इंसाफ़ के साथ फ़ैसला करो। यक़ीनी तौर पर अल्लाह तआला तुमको जिस बात की नसीहत करता है, वह तुम्हारे हक़ में बहुत अच्छी है। इसमें शक नहीं कि अल्लाह तआला सबकी सुनता और जानता है।

—सूरः निसा, पा० 5, रुकूअ़ 8

सच्चाई से काम बनेगा

ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और सीधी सच्ची बात कहो। ऐसा करोगे तो अल्लाह तआला तुम्हारे काम बना देगा और तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा। —सूरः अहज़ाब, पा० 22, रुकूअ़ 9

पाक रोज़ी

ऐ ईमान वालो! तुम वह पाक साफ़-सुथरी चीज़ें खाओ जो हमने तुम्हें दी हैं और इन नेमतों पर अल्लाह का शुक्र अदा करो, क्योंकि तुम उसी के बन्दे हो। —सूरः बक़रः, आ० 172, पा० 2, रुकूअ़ 24

ग़ुस्से को बर्दाश्त करना नेकी है

और जो लोग ग़ुस्से में आकर बे-क़ाबू नहीं हो जाते और लोगों के क़ुसूर बख़्श देते हैं (वे नेक किरदार हैं) और अल्लाह नेक काम करने वालों को पसन्द करता है। —सूरः आले इम्रान, पा० 4, रुकूअ़ 5

प्यारे नबी सल्ल० की प्यारी बातें

घर में दाख़िल हो तो सलाम करो

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं, मुझे हुज़ूर सल्ल० ने ताकीद फ़रमाई, प्यारे बेटे! जब तुम घर में दाख़िल हुआ करो तो पहले घर वालों को सलाम किया करो, यह तुम्हारे लिए और तुम्हारे घर वालों के लिए ख़ैर व बरकत की बात है।

अक़्लमंद आदमी

हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया, अक़्लमंद वह आदमी है जिसने अपने नफ़्स को क़ाबू में कर लिया और ऐसे काम किए जो मरने के बाद नफ़ा दें।

बीमार की मिज़ाज पुर्सी

हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया, जो आदमी बीमार आदमी को देखने के लिए जाता है, उसे आसमान से पुकारने वाला पुकार कर कहता है, तुम ख़ुश रहो, तुम्हारा चलना ख़ुशी की वजह हो और तुम्हें जन्नत में ख़ुशी और मसर्रत वाला घर नसीब हो।

बेहतरीन इंसान

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आप के किसी

सहाबी ने सवाल किया, बेहतरीन इंसान कौन है? आप ने फ़रमाया, जिसका दिल साफ़ हो और ज़ुबान सच्ची हो। सहाबा रज़ि० ने अर्ज़ किया, हम सच्ची ज़ुबान वाला तो समझते हैं, मगर साफ़ दिल वाले का क्या मतलब है? हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया, वह नेक और परहेज़गार आदमी है जिसने कोई गुनाह नहीं किया, किसी का हक़ नहीं मारा और उसके दिल में किसी की तरफ़ से कीना और हसद नहीं है।

जन्नती कौन?

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं, हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया, रिश्तों-नातों को तोड़ने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा।

अच्छी आदत

आंहज़रत सल्ल० ने फ़रमाया, तुम में सबसे अच्छा आदमी वह है जिसके अख़्लाक़ अच्छे हैं।

अच्छी नमाज़

हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया कि नमाज़ ऐसी पढ़ो कि जैसे यह आख़िरी नमाज़ है (कि इस नमाज़ के बाद फिर शायद पढ़नी होगी या नहीं?)

❖•❖•❖•❖•❖•❖•❖

हज़रत मौलवी मुहम्मद इलयास (1303-1363 हिजरी) ने मुसलमानों में दीनी ज़िन्दगी और ईमानी रुह पैदा करने की जो कोशिश एक ख़ास तरीके़ पर शुरु की थी और जिसमें आपने आख़िरकार अपनी जान खपा दी, हज़रत का असली कारनामा वही दीनी दावत है। आज भी यह सिलसिला बहुत तरक्क़ी और तेज़ी के साथ जारी है, अलबत्ता दावत के उसूल और उसकी रुह की हिफ़ाज़त की तरफ़ इस तहरीक से ख़ास तअल्लुक़ रखने वालों को ज़्यादा से ज़्यादा ध्यान करने की ज़रुरत है और इस सिलसिले में बहुत कुछ रहनुमाई इस मलफ़ूज़ात के मजमूए से भी हम हासिल कर सकते हैं।

इस किताब में मौलवी मुहम्मद मंज़ूर नोमानी (रह०) ने दो सौ से ज़्यादा मलफ़ूज़ात कलम बन्द किए हैं, जो हज़रत मौलवी मुहम्मद इलयास (रह०) ने मुख़्तलिफ़ मजालिस और तब्लीग़ी सफ़र वग़ैरह में बयान फ़रमाए थे। इस मलफ़ूजात में मौसूफ़ ने तब्लीग़ के उसूल व तरीक़ा-ए-कार के ख़ास पहलुओं पर रौशनी डाली है। ऐसा महसूस होता है कि गोया आज भी हज़रत सामने बैठे हुए फ़रमा रहे हैं।

किसी तहरीक और जमाअत के अग़राज व मक़ासिद और उसकी हक़ीक़ी रुह को समझने के लिए सब से अहम ज़रिया खुद जमाअत के बानी की सोहबत और उसकी रिफ़ाक़त है और उसके चले जाने के बाद सबसे क़रीबी और मुस्तनद ज़रिया उसकी किताबें, खुतूत और मलफ़ूज़ात हैं बल्कि खुतूत को कुछ हैसियतों से बाकी दोनों पर फ़ौक़ियत हासिल है।

आपके हाथों में जो किताब है यह मौलवी मुहम्मद इलयास (रह०) के खुतूत का मज्मूआ है जिसे मौलवी सय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह०) ने मुरत्तिब किया है।

इस मजमूए में कुल 65 खुतूत हैं जिनमें शुरु के 34 खुतूत खुद मौलवी अबुल हसन अली नदवी (रह०) के नाम हैं, उसके बाद 5 खुतूत मियांजी मुहम्मद ईसा फ़ीरोज़पुरी मेवाती के नाम हैं, फिर 20 खुतूत दूसरे कारकुनान और दोस्तों के नाम और आख़िर में 4 खुतूत मेवात के तब्लीग़ी कारकुनान के नाम हैं।

यह खुतूत बेहद मक़बूल, माज़ी की यादगार और क़ीमती सरमाया हैं।

ISBN 81-7101-505-0

ISBN 81-7101-519-0

ISBN 81-7101-517-4

ISBN 81-7101-522-0

ISBN 81-7101-526-3

ISBN 81-7101-547-6

ISBN 81-7101-483-6

ISBN 81-7101-500-X

ISBN 81-7101-524-7